श्रीरस्तु

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम्

[हिन्दी]

अनुवाद

श्री वे सोमेश्वर शर्मा एम् ए, बी ओ एल,

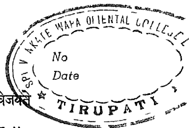
हिन्दीप्रधानाध्यापक श्रीवेङ्कटेश्वर प्राच्यकलाशाला तिरुपति



प्रकाशक

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

१९६०



श्रीनिवासो विजयते

॥ निवेदन ॥

दक्षिण भारत के अनेक प्राचीन दिव्य क्षेत्रो मे श्री तिरुमल तिरुपति एक अत्यत पवित्र एव महिमान्वित क्षेत्र है । यहॉ के श्रीवेङ्कटाचल पर श्रीबालाजी वेङ्कटेश्वर स्वामी, जो श्रीमहाविष्णु के अवतार ह, आविर्भूत होकर युग युग से अपने भक्तों का दु ख दै य दूर करते हुए उनके सभी अभीष्ट सफल बना रहे है । इस कलियुग मे श्रीवेङ्कटनायकजी ('कलौ वेङ्कट-नायक ') सेवक जनो के प्रत्यक्ष दैव, रक्षक तथा आराध्य है उनके चरित्र और स्थल के महात्म्य को श्रीवराह, भविष्योत्तर, ब्रह्माण्ड इत्यादि सस्कृत के पुराण ग्रथ विशद रूप से उद्घोषित कर रहे हे ।

हिन्दी भाषा भाषी भक्तजनो के उपयोगाथ प्रस्तुत पुस्तक ' श्री वेङ्कटाचलमाहात्म्यम् ' हि दी गद्य मे श्री तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के द्वारा प्रकाशित हुई है जिसमे पुराणोक्त वेङ्कटाचल महात्म्य का सक्षिप्त परिचय दिया गया है ।

सहृदय पाठको से निवेदन है कि वे इस पुस्तक का हृदयपूर्वक स्वागत करे और प्रकाशको का उद्देश्य सफल बनावे ।

अन्त मे मै श्रीबालाजी वेङ्कटेश्वर स्वामी से अपनी त्रुटियो की क्षमा याचना तथा उनकी कृपा कामना करते हुए यह विनम्र प्रार्थना करता हूँ कि वे सर्वदा दयापूर्वक भक्तजनो की रक्षा एव कल्याण किया करे ।

वै सोमेश्वर शर्मा,

निवेदक

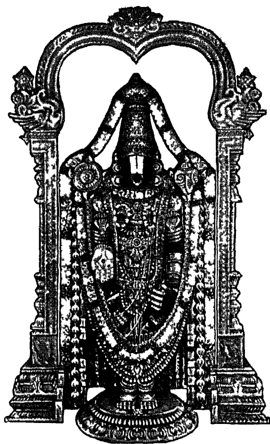
वि यसूचि

प्रथमाश्वास

द्वितीयाश्वास

क्रमसंख्या | पृष्ठसंख्या

तृतीयाश्वास



तिरुपति (श्रीबालाजी) श्रीवेंकटेश्वर

श्रीश्रीनिवासपरब्रह्मणे नम ।

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् ।



प्रथम आ॰ ास ।

श्रिय का ताय कल्याणनि ये निधये ऽर्थि नाम ।
श्रीवङ्कटनिवासाय श्रीनि ासाय मङ्गल्प ॥
यन वेदार्थविज्ञेन लोकानुग्रहकाम्यया ।
प्रणीत सूत्रम खेन स्मै विखनसे नम ॥

१ श्रीवेङ्कटाचलमा ा म्य सुनाने को सूतजी से मुनियो का प्रार्थना करना ।

शौनकादिमनिया ने सूतजी से प्राथना की – हे सूत भगवान! आप श्री विष्णुभगवान के उस अद्भुत, नत्रान दप्रद तथा मनोहर व ष्णव क्षेत्र का वणन कीजिय जिसम वे स्वय यवत ह जिससे श्रीमहाविष्ण को अत्यन्त प्रेम हे, जहाँ सब सिद्धिया सिद्ध होती ह जहा श्रीविष्ण का चरित अत्यद भत होता है, जहा रहते हुए मनष्यो को भगवान का साक्षात्कार होता हे, और जहा विष्णुचरित श्रवणानन्दजनक गौर मधुर होता हे ।

श्रीसूतजी कहन लग – हे म निश्रेष्ठो! आप लोगो ने अत्यन्त अपूव वत्तात पूछा और मेरी भी बहुत इच्छा होती हे कि म श्रीमहाविष्ण का चरित कहू । अत म उसे आपलोगो से अवश्य कहूगा । आपलोग सावधान होकर सुनिय । श्रीहरि की क्रीडाओ से सुगठित और उनके अनक भाति भाति के चरितो से परिपूण, सभी सिद्धिया देनेवाला सभी ऐश्वय को करनवाला सर्वाश्चयकारक तथा शुभफलप्रदायक परमपवित्र, आयु को बढानेवाला एव सवमङ्गलकारक तथा श्रीशषाचल सम्बन्धी श्रीवराहकल्प नामक वत्तान्त ही श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्य है ।

श्वेतवराहरूप में श्रीमहाविष्णु का पृथ्वी को उठाकर लाना ।

प्रलय के समय समस्त ससार के जलमय हो जान पर पथ्वी जलमग्न होगई । तब सवशक्तिमान भगवान श्रीमहाविष्णु वटपत्र का आश्रय लिय हुए ब्रह्माजी से यथापूव ससार की रचना करान को उद्यत हुए । उन्होने श्वेतवराह की देह शीघ्र धारण कर जल मे प्रवेश किया । वहा ढूढकर पथ्वी को ऊपर लाते समय

हिरण्याक्ष न उन्हें रोका। महावराह श्रीभगवान ने महाघोर युद्ध करके उस महासुर का सहार किया और सभी सत्त्वो से समाश्रित पृथ्वी को दन्ताग्र से बाहर निकाल जनलोक में लाकर स्थापित कर दिया। इस प्रकार पृथ्वी की स्थापना करके श्रीश्वेतवराह रूप महाविष्णु ने चतुमख ब्रह्माजी को बुलाकर पूववत सष्टि करन के लिये आज्ञा दी। इसके पश्चात वराह का रूप धारण किय हुए भगवान विष्ण न दुष्टो को दण्ड देकर सज्जनो की रक्षा करन तथा लोक कल्याण कामना से इस पृथ्वीपर कुछकाल पयन्त रहने का निश्चय किया। (वराह पु० ३३ अध्याय)

३ वैकुण्ठ से गरुड के क्रीडापवत लाने की कथा।

इस पृथ्वी पर कुछ समय तक रहने का निश्चय कर श्रीमहाविष्णु ने अत्यन्त अदभत क्रीडापवत लान क लिय गरुडजी को वकुण्ठ में भजा और आप अपने रहने योग्य स्थान का अन्वेषण करते हुए गोमती नदी के दक्षिण भाग में साठ योजन दूरपर तथा पूव समद्र से पाच योजन पश्चिम स्वर्मा नदी के उत्तर में पुण्य जनो से समाकीण दिव्य प्रदेश में पहुचकर गरुड जी के आन की प्रतीक्षा में ठहर गय। इधर गरुडजी ने भी परमधाम वकुण्ठ में जाकर बिलकुल अप्राकृत तथा सब रत्नो से परिपूण, स्वणमय ऊचे शिखर युक्त उपनिषदात्मक सुरद्रम शोभित तदाश्रित विहग वृन्द के मधर आलापो से श्रवणानन्दजनक, फूली हुई लताओ से दिव्य सौरभ सम्पन्न गाते हुए किन्नरो से सुशोभित मनको आनन्द देनवाले अनक झरनो से सेवित, अनेक मुक्त महात्माओ से नाना प्रकार सेव्यमान, तीन योजन का चौडा और तीस योजन का लम्बा भगवान का शरीर शेषनाग के आकार का अत्यन्त दिव्यरूप सब शरीर धारियो का आत्मस्वरूप महापुण्यदायक, दशनमात्र से मोक्षदायक नारायणगिरि नामक परमात्मा का क्रीडापवत अपने कध पर रखकर भगवान के सब परिचारको तथा सब गणो सहित परमात्मा के समीप पहुचकर उनके द्वारा निर्दिष्ट स्थान पर उसे स्थापित कर दिया। श्वेत वराह रूप विष्णु उस पवत पर स्वामिपुष्करिणी के तीर पश्चिम भागस्थ करोडो सूय के समान चमक वाले विमान में रहे। फिर कुछ दिन बाद श्रीस्वामिपुष्करिणी के दक्षिण भाग में एक अन्य विमान में कमलनयन, परात्पर शङ्खचक्र गदाधारी भगवान श्रीनिवास का उद्भव हुआ। (वराह पु० ३४ अध्याय)

४ श्रीस्वामिपुष्करिणी – माहात्म्य।

तब ब्रह्मरुद्रादि देवतागण, गन्धवगण सप्तर्षिगण मरुद गण आदि सबन आकर हिरण्याक्ष का वध करन के लिय कराल दान्त मुखवाले एव अत्यन्त उग्र महाभयकर वराह रूप को स्वीकार किय हुए जगत्प्रभु, हृषीकेश भगवान विष्णु

की वन्दना स्तुति करते हुए प्राथना की – "आपने देवता तथा मनुष्यो के रहने के लिये ही इस पथ्वी का उद्धार किया हे अतएव मनष्यो के रक्षाथ आप शान्त रूप ही धारण करें। ध्यानयोग में अशक्त देवताओ, मनुष्यो, स्त्रियो एव शूद्रो को आप दशन देकर वर प्रदान करते हुए इसी स्थान में ही सदा निवास करें।"

यह सुन प्रसन्न होकर चतुभुज भगवान विष्ण ने शरत कालीन चन्द्रमा के समान मुखवाले समस्त आभरणो से अलकृत सौम्य अथवा शान्त रूप धारण कर सुरवन्द से कहा – "वेङ्कट नामक यह पवत वकुण्ठ से भी बढकर श्रेष्ठ है। अत यहीं श्री भू सहित निवास करते हुए म सभी प्रार्थी मनुष्यो को मनोभिलषित अथ देता रहूगा।"

क्रीडाद्रिसहित यहीं स्वामिपुष्करिणी गरुड जी द्वारा वकुण्ठ से लायी जाकर धरणी पर रख दी गई है। वकुण्ठ में श्रीमन्नारायण इसी में क्रीडा करते ह। यह श्रीदेवी तथा भूदेवी जी को परमप्रिय है। यह अप्राकृत जल से परिपूण, अत्यन्त सुगधित तथा मनोहारिणी है। यह गगादि सब तीर्थों की जन्मभूमि है विरजा नदी के समान अनन्त पापो का नाश कर देती है। सुवण चुरान तथा सुरापान करन के महा घोर पापो का नाश कर देती है। स्नानमात्र ही से सब लौकिक फल देती है। इसके दशन पान तथा स्मरण से सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती ह। स्नान करन पर यह इष्टसिद्धि देती है।

स्वामिपुष्करिणीस्नान सद गरो पादसेवनम।
एकादशीव्रत चापि त्रयमत्यन्तदुलभम॥

दुलभ मानुष जन्म दुलभ तत्र जीवनम।
स्वामिपुष्करिणी स्नान त्रयमत्यन्तदुलभम॥

अर्थात स्वामिपुष्करिणी म स्नान, सद गरु की चरण सेवा तथा एकादशीवत ये तीनो अत्यन्त ही दुलभ ह। ससार में मनुष्य जन्म ही दुलभ है, तिसपर जीवन तो और भी दुलभ हे और उसपर भी स्वामिपुष्करिणी तीथ स्नान तो दुलभाति दुलभ है। (वराह पु० ३५ अध्याय)

५ क्रीडाद्रि (वेङ्कटाद्रि) क नाम – भेद।

क्रीडाद्रि एक एक कारण से एक एक नाम पाकर कई नामो से अभिहित होती है। उनमें कुछ नाम सकारण बताये गये ह। इस पवत पर सिद्धियो का चिन्तनमात्र से ही लाभ होन से इसे चिन्तामणि कहा जाता है। ज्ञान प्रदान करन के कारण ज्ञानाद्रि, सभी तीथमय हान से तीर्थाद्रि तथा अनन्त रमणीय पुष्करो के रहने के कारण पुष्कराद्रि आदि नामो से इसे पुकारा करते हैं। इस

गिरि पर यमधमराज ने तपस्या की अतएव इसका नाम वषाद्रि पडा । सुवणमय होन के कारण उसे कनकाद्रि कहते ह । प्राचीन काल म नारायण नामक किसी ब्राह्मण न यहा तप करके मरारि भगवान से अपन नामपर ही इसकी नाम – प्रतिद्धि क लिय प्राथना की थी, अत उत्तम पुरुष इसे तब से नारायणाद्रि भी कहते ह । यह वकुण्ठ से आन के कारण वकुण्ठाद्रि कहलाता है । हिरण्यकशिपु के विनाश तथा प्रह्लाद के ऊपर अनुग्रह करन के लिय स्वय भगवान न इस पर जबसे नरसिह की आकृति धारण की तब से इसको सिहाचल कहते ह । जब अञ्जनादेवी न तप करके हनमान जी को उत्पन्न किया तब सभी देवताओ ने आकर देवताओ के सहायक पुत्र हनमान के जन्म देन के कारण इसे अजनाद्रि नाम से पुकारा । वराह क्षत्र होन के कारण इस वराहाद्रि नाम से पुकारते ह । महावीर वानरेन्द्र नील का स्थायी निवास स्थान होने के कारण महर्षिगण इसको नीलगिरि कहते ह ।

'व कार अमत बीज है और कट" का अथ ऐश्वय हे । अतएव अमत और एश्वय के सयक्त होन के कारण यह वेंकटाद्रि कहा जाता है । किसी समय देवाधिदेव श्रीनिवास इस स्थान पर विराजमान थ, अत इसको देवताओ ने श्रीनिवासाद्रि कहा । भगवान का क्रीडा स्थान एव आनन्दधाम होन के कारण वकुण्ठ म रहन वालो न इसका नाम आनन्दाद्रि रखा । धन एव शोभा देन के कारण तथा लक्ष्मी जी का वास स्थान होन के कारण रूप एव शब्द शक्ति के योग से श्रीशल एसा इसका नाम हुआ । (वराह पु० ३६ अध्याय)

६ वेङ्कटाद्रि पर भगवान के अद्भुतकार्य

इस पवत का माहात्म्य सुनकर परमतत्त्वदर्शी कुछ ऋषियो न यही सवदा रहन का निश्चय किया और उन्होन इस पवत पर आकर बस जान के कुछ दिनो बाद यथा साध्य विष्णु के उद्देश्य से तथा परम उत्कण्ठा से एक महायज्ञ करना आरभ किया । महामायावी विष्ण भगवान भी अपनी अर्द्धाङ्गिनी लक्ष्मीजी के साथ यज्ञवाट में आ पहुचे और उन्होन ऋषियो के होम किय हुए वपा को दोनो हाथो से स्वीकार किया । मनि लोग भी अत्यन्त प्रसन्न हुए कि साक्षात विष्णु भगवान ही हम लोगो के यज्ञ म आय अतएव हम लोगो का परम भाग्य हे । ओर हम लोगो का जीवन भी धन्य है ।

प्राचीन समय म वकटाधीश श्री भगवान विष्ण अत्यन्त मनोहर सुन्दर सुकुमार स्वरूप म वेंकटाचल के शिखर पर विचरण करते थे । उसी समय उन्होंने किसी अतिवद्ध जजर आकृतिवाले, अन्दर धसे नत्रवाल, झकी हुई कमरवाले, क्षधा एव तष्णा से पीडित रास्ता भूले हुए तथा उसी जगल के एक चटटान पर

बठ हुए एक ब्राह्मण को देखा जो सूख हुए कण्ठ से एसा कह रहा था कि "हे कौण्डिन्य! मझ इन सौ वर्षो की अवस्था म छोडकर किधर चले गय? ' यह सुनकर उपरोक्त कुमाररूप में श्रीहरि न कहा – 'यहा तो कोई मनष्य नही हे कोण्डिन्य कहा रहता है आप यह क्या बोलते ह?" यह सुनकर वह वद्ध ब्राह्मण बोला – 'हाय! हाय!! हम मरे हाय!!! हमारा आश्रम बहुत दूर है, म वहा किस तरह जाऊ! इस बन्धु – बान्धओ से विर्वजित दुबल को इस लाव म ब्रह्माजी क्यो रख हुए ह!'

यह सुनकर कुमाररूप धारण किय हुए श्रीहरि उस ब्राह्मण से यह वचन उपहास के साथ बोले – ' हे ब्राह्मण! तुम्हारा शरीर बडढा हो गया। तुम कुछ भी नही देख सकते। इस पर भी क्या तुम्हे जीन की इच्छा हे! अथवा हे सुव्रत क्या तुम्हारे पूर्वाक्त वाक्य सत्य नही ह!' यह सुन ब्राह्मण ने कहा – मझ को जीन की इच्छा तो नही है। कि तु म ने ज्योतिष्टोम आदि नित्य कम नही किय ह। म देवताओं का ऋणी होकर अपनी देह कसे छोड सकूगा?" तब श्रीहरि ने ब्राह्मण से कहा – ' हे ब्राह्मण, आप मेरे इस हाथ को पकडिये"। ब्राह्मण भी उनका हाथ पकड कर उनके साथ धीरे धीरे जान लगा। कुछ दूर ले जाकर किसी पुण्य – दशन, शुभ्र निमल जलवाले झरन को दिखाकर कहा कि ' हे ब्राह्मण! आप इस झरन म स्नान कर लीजिय।" तदनसार विप्रेन्द्र ज्योही स्नान कर उसमें से बाहर निकले कि एकदम सोलह वष के अपूव सुकुमार युवक हो गये। तब श्रीहरि न उस विप्र से कहा कि आपको कर्मानुष्ठान करन के लिय शरीर ही नही, वरन बहुत धन भी दिया गया। अतएव आप सब प्रकार से कर्मानुष्ठान कीजिय।" एसा उस ब्राह्मण से कहकर श्रीहरि इस प्रकार अन्तर्धान हो गये कि देव मनष्य गन्धर्वादि सब आश्चययुक्त हो गय। पश्चात सब देवता जमा होकर कहन लगे कि इस नदी में स्नानकर यह वद्ध ब्राह्मण कुमार हो गय ह अतएव यह नदी आज से कुमारधारा के नाम से ससार मे विख्यात होगी।

(वराह पु० ३७ अध्याय)

प्राचीन काल मे साकाश्य देश मे शखण नामक सोमवशीय राजा परम्परा प्राप्त अखण्ड राज्य का पालन करते थ। किसी समय अपन कृत पुण्य के क्षीण हो जाने पर उन्होन अपने परम्पराप्राप्त सम्पूण राज्य को खो दिया और तब से अपनी स्त्री तथा अमात्यो के साथ देश से निकलकर परम दु खित मन से दक्षिण दिशा में चलते चलते श्रीरामसेतु को देखा। वहा स्नान करन के बाद स्वणमुखरी नामक नदी के किनारे आय और उसमे स्नान करके उसके उत्तर किनारे के पद्मसर पर आकर वहा भी स्नान किया और पूजादि नित्य कम समाप्त करके दु खित होकर बठ गय और सोचते सोचते निद्रा को प्राप्त हो गय। राज्यनाश के शोक

से अभिभूत होकर निद्रा म पड हुए राजा को अशरीर वाणी सुनाई पडी — राजा अब धयधारण करो, सोच मत करो । यहा से लगभग कोस भर दूर उत्तर की तरफ पथ्वी तल म अत्यन्त विख्यात वकटनामक पवत है । वहाँ अ हाँ दयाकरनेवाले कमलापति भगवान वास करते ह और वहीं कोई स्वामि पु रिणी नाम से विख्यात अत्यन्त शुभ्र खिले हुए कमलो से परिपूण पुष्करिणी । उसके पश्चिम भाग म दीपकमय पवत हे । उठो, वहीं जाओ उसी के कि कुटी बनाओ और वहा रह कर त्रिकाल स्नान करते हुए वेंकटश भगवान चतु शखचक्रधारी हरि की छ मास तक श्रद्धा भक्ति से ध्यान और पूजा करते निवास करो । ऐसा करने से तुम अवश्य स्वामित्व और स्वराज्य पा जाओगे' यह सुनकर वह राजा शोकत्यक्त होकर परम पवित्र वकटाद्रि शिखर पर प गये और उन्होन अशरीर वाणी के कहे अनुसार किया । तब स्वामिपुष्करिणी बीच से महा अद भत अनेक सूय के तेजवाले, दसो दिशाओ को शोभित करते शखचक्र गदाधारी श्रीपति भगवान श्रीदेवी एव भूदेवी के साथ प्रत्यक्ष हु कौतूहल से उठकर तुरन्त शखण न प्रणाम तथा स्तुति करके देवादिदेव भगवा निवेदन किया कि "हे देवदेव जगन्नाथ! मुझे मेरा स्वामित्व और राज्य प्र कीजिये ।" यह सुनकर श्रीपति बोले — दु ख मत करो तुमने महाभक्ति साथ स्वामिपुष्करिणी में स्नान किया । अत तुम्हें स्वामित्व मिल ही जायग इसी प्रकार जो कोई यहा आकर भक्तिपूवक स्वामिपुष्करिणीतीथ म स्नान क वह मनुष्य अवश्य ही स्वामित्व लाभ करेगा । हे राजन! अब तुम जाकर अ राज्य प्राप्त करो ।" यह कहकर श्रीहरि अन्तर्धान हो गय । महाराज शखण अपनी स्त्री के साथ प्रफुल्ल एव सन्तुष्ट हृदय से उस पवत पर से उतर कर अ देश को गये । तब गोदावरीतट पर राजा की प्रजा ने उनके सामन आकर निवे किया कि "सामन्त राजगण राज्य पान की इच्छा से परस्पर युद्ध करके र छोड गये । यह राज्य आप ही का है । इसलिय आप चलिये और अपन राज्य पालन कीजिये ।" यह कहकर उन्होने अपने राजा को ले जाकर राज्याभिषि किया । इस प्रकार स्वामिपुष्करिणी का जो नाम हे वह सब तीर्थों का स्व होने, और स्वामित्व प्रदान करने के, कारण सायक हुआ था ।

(वराह पु० ३८ अध्या

मध्यदेश में कोई आत्माराम नामक ब्राह्मण रहता था । उसन महान में जन्म लिया था और देव ब्राह्मण का अन य उपासक था । वह बडा विष्णुभ और वेद वेदान्त का परम ज्ञाता था । उसके पिता की मृत्य होने के कुछ दिनो में उसका क्रमागत सारा धन चला गया और उसकी जीविका भी शि हो गयी । किसी स्थान में उसे पूज्यता न रह गई । वह अपनी स्थिति पर सो

लगा कि अब म क्या करू और कहाँ जाउ ? इसी सोच म मग्न वह वेंकटाचल पर चलने का निश्चय करके कपिलतीथ म स्नान कर कपिलेश्वरजी के दशन करके और भी पवत पर चढकर क्रम से अन्य सत्रह तीर्थो में नहाया। इस प्रकार स्नान करने से पाप मक्त होकर निमल चित्त हो अधित्यका पर चिन्तायुक्त तथा शोक परायण होकर बठा।

उसी समीप की गहा के बीच ध्यान योग मे सलग्न जलती हुई अग्नि के समान तेजयुक्त योगीन्द्र सनत्कुमार को देखा– अदष्टपूव परम पण्डित महा योगीन्द्र यह सब जानते ह, अतएव इन से अपने हित की कुछ बात पूछूगा –' ऐसा सोच कर एव प्रणाम कर – म अत्यन्त दु ख से दु खित पाप कर्मा आपकी ही शरण में उपस्थित हुआ हू। आप कृपया मेरे हित की बात बताइय" –इत्यादि बातें कहते कहते उनके निकट ही भूमि पर साष्टाङ्ग गिर पडा। तदनन्तर उन्होंने भी ध्यान कर कुछ काल के बाद सक्षप में कहा कि "तुमने पूवजन्म म बहुत पाप किये, उसका फल अब भोग रहे हो। पहले तुमने दानादि म अनेक उपद्रव किये और सुख से रहनवालो को अनन्त पीडा दी थी, अनक अनाचार किये। प्रणतजनो के दु ख हरण करने वाले श्रीविष्ण भगवान की भक्ति लेश मात्र भी नहीं की तो किस तरह सुख होगा ? तथापि तुम्हारे लिये एक उपाय है। म कहता हू। तुम आदर के साथ सुनो। सवलोको की जननी भगवान की प्रिया महालक्ष्मीदेवी ही सब पापो का नाश करन में समथ ह वही सभी सम्पत्ति देनवाली ह। उनके व्यूह मत्र का उपदेश तुम्ह दूगा। तुम शीघ्र ही उस देवी की शरण में जाकर उनकी सेवा करो"। यह कह कर और मत्र का उपदेश देकर वे अन्तर्धान हो गये।

आत्माराम परम प्रसन्न होकर स्नान कर बहुत पवित्र होगया। उस मत्र को जपते जपते वह वेंकटाद्रि पर चढ गया। वहा पवतो से निकले हुए अनक झरनो को देखते हुए श्रीस्वामि पुष्करिणी के पास भाग्यवश जा पहुचा। आत्माराम ने शास्त्रोक्तविधि के अनुसार उसम स्नान किया। स्नान कर लेने पर उसका पाप कट कर शरीर हलका हुआ सा मालूम हुआ। उस पुष्करिणी के तट पर सर्वाभरण भूषित, पीताम्बरधारी, श्रीदेवी और भूदेवी सहित श्रीवेंकटेश्वर भगवान विराजमान होते हुए एक विमान मे प्रत्यक्ष हुए जो रत्नखचित और सोने का बना हुआ था। आत्माराम उनको साष्टाग प्रणाम कर मग्ध हो उनके सम्मुख खडा होगया। सवज्ञ करुणारूप श्रीनिवास ने उसके मनोगत भाव को जानकर उससे कहा –' भय न करो, तुम्हारा सब पाप क्षमा किया। तुमको अनन्त आयु और एश्वय दिया। तुम अखण्ड भोग करो"। ऐसा कहते हुए भगवान को उस द्विज श्रेष्ठ न पुन प्रणाम किया, परन्तु जब ऊपर उठा तब

भगवान को न देख पाया। तब वह ब्राह्मण यह सोचने लगा कि यह स्वप्न था अथवा सत्य घटना ही थी? इस प्रकार सोचते हुए वह ब्राह्मण उस पर्वत से नीचे उतर आया और वेंकटाचल के निकट ही प्रसन्न चित्त से निवास करने लगा और पीछे यथप्सित सुख बहुत दिनों तक भोगता रहा। (वराह पु० ३९ अध्याय)

७ कपिलादिसप्तदश तीर्थ माहात्म्यम्।

वेंकटाद्रि के निम्न प्रदेश में कपिलतीर्थ है। उसके पास में कपिल लिंग है जिसको प्राचीन काल में कपिल मुनि ने पूजा था। वह परम पवित्र लिंग पृथ्वी को भेदकर पाताल से बाहर निकल आया। सब देवताओं के प्रार्थना करने पर वह पृथ्वी पर स्थापित हुआ। तब उसी लिंग के सामने की भूमि को भेद कर कपिला नदी निकली। उसी तीर्थ को परम पवित्र कपिल तीर्थ कहते हैं। वह तीर्थ सब पापों का नाश करनेवाला है।

उसके ऊपरी प्रदेश में परम पावन शक्र तीर्थ है, जिसमें स्नान करने के कारण इन्द्र को अहल्या के संयोग से लगे हुए शाप से मोक्ष हुआ था।

उसके ऊपर पुण्य को बढानेवाला विष्वक्सेन तीर्थ है जहां वरुण के पुत्र विष्वक्सेन ने अतिदुस्तर तपस्या कर साक्षात हरि भगवान के सारूप्य को प्राप्त कर सेनापतित्व पाया था। उसके ऊपर पञ्चायुधों का तीर्थ है। फिर ऊपर अति कष्ट से चढने पर परम दुर्लभ अग्नितीर्थ मिलेगा। उसके ऊपर ब्रह्म हत्यादि महापापों से मोचन करनेवाला पुण्य विवर्धक ब्रह्मतीर्थ पाओगे। तत्पश्चात सप्तर्षियों के पुण्य तीर्थ मिलेंगे। इन तीर्थों का उत्तरोत्तर दस गुना पुण्य फल सुसाध्य है।

पहले कोई ब्राह्मण समस्त संसार में सब तीर्थों की यात्रा करने के लिये उद्यत हुआ तो कमलापति भगवान ने स्वप्न में प्रत्यक्ष होकर उससे कहा — 'तुम किसलिये इतना श्रम करते हो? इसी वेंकटाचल पर सत्रह दिव्य तीर्थ हैं। शास्त्रोक्त रीति से इन तीर्थों में स्नान करने से सम्पूर्ण तीर्थों का स्नानफल तुम अवश्य पा जाओगे'। यह सब उस ब्राह्मण ने स्वप्न में सुना और अन्यान्य तीर्थों में न जाकर उसी वेंकटाचल पर सत्रहों तीर्थों में स्नानकर पूर्वोक्त प्रकार समस्त तीर्थों का स्नानफल पाया इस तरह की जनश्रुति है।

तीनों लोकों में समस्त तीर्थ हैं। उन सब का प्रकृतिभूत तीर्थ इसी वेंकटाद्रि पर है। इसलिये यदि किसी को भूमि परिक्रमा करने की इच्छा हो तो वह सर्वतीर्थमय, सर्वपुण्यक्षेत्रमय इसी वेंकटाचल की प्रदक्षिणा कर भूमि प्रदक्षिणा

का सम्पूर्ण पुण्य यही प्राप्त कर सकता है। नीवकटाचल के शिखर के दर्शनमात्र से ही हलायध श्रीबलराम ने सम्पूर्ण तीर्थ यात्रा का फल पा लिया था – यह हमने सुना है।

श्रीकृष्णजी के उपदेश से वकटाद्रि पर आकर धमराज प्रभृति पाण्डवो ने क्षत्रपालो से सुरक्षित किसी पुण्यतीर्थ म स्नानपानादि करते हुए वर्षभर निवास किया। उसी समय धमराज को एक अति उत्तम स्वप्न म ज्ञात हुआ कि तुम लोगो न इस तीर्थ म वर्ष पर्यन्त निवास किया है, अतः तुम्हारे इस पुण्य योग से पाप क्षीण होकर युद्ध मे तुम्हे जय तथा गतागत राज्य की प्राप्ति होगी। तभी से वह तीर्थ पाण्डवतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

८ वकटाद्रि पर श्रीरामचन्द्रजीका आगमन।

ऋष्यमूक पर्वत से बहुत सी वानरसेना से समावृत होकर, रावण का वध करने को उद्यत हो धनुर्धारी श्रीरामचन्द्रजी जब शेषाचल के समीप आ पहुचे तब वायपुत्र हनुमान की माता साध्वी अञ्जनादेवी श्रीरामचन्द्रजी के सामने आकर प्रणाम कर यह वचन कही – "आप के आगमन की प्रतीक्षा करती हुई म इस पर्वत पर रहती हू। अनेक मुनिगण भी इस जगल म आप के आगमन की प्रतीक्षा में तप करते ह। उन सब से अनुज्ञा लेकर आप का जाना उचित है"। यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजी न प्रत्युत्तर मे कहा – "मझका वहा आ आने से बहुत देर हो जायगी। मझ अब अत्यन्त शीघ्र जान की आवश्यकता है। फिरसी बार तुम्हारे कथानुसार करूगा"। महामति श्रीहनुमान श्रीरामचन्द्रजी की इन बातो को सुनकर प्रणाम कर नम्र होकर ये वचन बोले कि 'यह वानरसेना थकी हुई है, अतएव कही न कहा यहा ठहरना ही उचित होगा। यह पर्वत हम लोगो के माग में ही है। इस के सिवा यह पर्वत पुष्प फल द्रुमो से भरा हुआ है अनक ऋषि इस पर बह रहे ह। यहा पर स्वादिष्ट कन्दमूल बहुत मिलते ह। गिरिगुहा के वक्षो मे मधु बहुत अधिक है। आप यह सब जानते ह। अब जसी इच्छा हो वसा कर । यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजी न उसका उद्देश्य जानकर उस पर्वत पर विश्राम करके जाना स्वीकार किया।

वेदविद्यापारगत, परमधर्मात्मा निलमा नामक कोई ब्राह्मण, ब्रह्मलोक पाने की इच्छा से ब्रह्माजी को उद्देश कर पर्वत के उत्तरभाग म आकर तपस्या करने लगा।

तब ब्रह्माजी ने आकर उस द्विजश्रेष्ठ से कहा – ' जब तुमको लक्ष्मणजी के साथ श्रीरामचन्द्रजी के शुभदर्शन होग तब तुम्हे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होगी"।

जसा ब्रह्माजी न पहले कहा था वसा हुआ – उस द्विज श्रेष्ठ ने वकटाद्रि पर चढते हुए परमात्मा श्रीरामचन्द्रजी क दशन कर फल फूल मल आदि के द्वारा सम्यक प्रकार से उनकी पूजा की। उसकी पूजा स्वीकार कर श्रीरामचन्द्रजी ने उसे ब्रह्मलोक भज दिया। फिर वे आकाशगगा के समीप अजनादेवी के परम पवित्र तथा पुण्यवधक आश्रम म चले गये। वहा महाभागा अजनादेवी से पूणतया सम्पूजित होकर वे स्वामिपुष्करिणीतीथ को चले आये। वहा श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण हनुमान सुग्रीव, अगद, जाम्बवान तथा नीलादि सबो न उस विजयप्रद महातीथ म स्नान किया एव नऋत्यदिशा म पणकुटी बनाकर सब के साथ स्वादिष्ट फल मूल मध का भोजन कर सुखपूवक रहने लग। वानर भी सवत्र के स्वादिष्ट फल मूल मध खाकर उस पवत पर विचरण करन लगे।

(वराह पु० ४६ अध्याय)

० वानरो का वैकुण्ठगुहा मे प्रवेश।

स्वामिपुष्करिणी के ईशानभाग म एक गुहा थी। उस अधकार से व्याप्त गहा म गज, गवाक्ष शरभ गध मादन, मयद गवय, द्विविध सुषण आदि वानर घस गये। सिहतुल्य पराक्रम सम्पन्न सभी वानर आख खोले हुए तमोवत्त गुहा में बहुत दूर तक चले गय। वहा उन्होन करोडा सूय क समान ज्योतिसम्पन्न किसी अदभुत प्रकाश या तेज को देखा। वहा उन्होन एक परम रम्य तप्त सुवण से बनी हुई काई पुरी देखी जो किवाड, तारण रम्योद्यान, स्फटिकशिला के समान उज्ज्वल जलवाली नदियो से समावत्त तथा रत्न, माणिक्य वडूय, मणि, मुक्तादि से निर्मित गोपुरादि से युक्त तथा अनक मण्डपो से सुसज्जित सहस्रो विशाल विशाल प्रसादो से समावत एव अनक लम्बी चोडी गलियो से सुसज्जित थी। वहा के सभी निवासी शखचक्रधारी और चतुभज थ। वे श्वेतमाल और श्वेतवस्त्र धारण किय हुए थे, और सर्वाभरणभूषित सुगधित चन्दन लगाय परमानन्दपूरित थ। उसक बीच महादित्य सूय के समान प्रकाशमान अत्युन्नत बड ऊचे पवत के समान ऊचा अत्यन्त मनोहर अनन्त प्रकाशोज्ज्वल एक मणिनिर्मित मण्डप से सुशोभित और साथ हा साथ नत्य गान किन्नरालाप से गजायमान एक विमान था जिसम पूणचन्द्र के समान परममनोहर मुखवाले, चतुभज शखचक्रधारी, पीताम्बर पहने सोन के सुदर आसन पर शान्ति भाव से आसीन फणि मणि जटित किरीट मकुट धारी शष नाग के फण पर बठ सर्वाभरणभूषित एव दाहिना हाथ आसन पर रख हुए दाहिना पर फलाये, बाय जान पर बाया हाथ खोले हुए श्री भूदेवियो स सवित वजयतीमाला पहन श्रीवत्स कौस्तुभ मणि छाती पर धारण किय वनमाला विभषित पुरुषोत्तम, कृपारसपूण, पद्म के समान नत्रवाले,

चन्द्रमा की ज्योति के समान छत्र लगाये, सुन्दर पखा धारण किय हुए स्त्रियो से सेवित एक परम पुरुष को देखा। वे वानर उनको देखकर अत्यन्त आश्चर्यान्वित हुए। इतने ही म वह अद्भुत चारभजावाले परम पराक्रमी पुरुष उन वानरो को देखकर शीघ्र आक्रमण करते हुए दण्ड उठा कर उन्ह डाटने लगे। उस समय वे सब वानर अत्यन्त भयभीत होकर उस गिरि गह्वर से बाहर निकल आय और जो कुछ उन्होने देखा था, वह सब दूसरे वानरो से कहने लगे तो उन्होने तो कहा– 'यह महामायावी कामरूप वचक रावण था अथवा कोई अन्य? इसकी विशेष रूप से तलाश करनी चाहिये"। ऐसा कह कर सब वानर फिर मिलकर उसी पूर्वदृष्ट गुहा मे घुस गये, परन्तु वहा पर वह नगरी अथवा पहले देखे हुए चिन्ह भी नही देखे। श्रम से उस पर्वत के सभी भागो को खोज कर अपना श्रम समझ शान्त होगये। पश्चात प्रभात होने पर श्रीरामचन्द्रजी वानरसेना के साथ वेंकटाद्रि से उतर कर लका मे चले गये और युद्ध मे रावण का वध कर सीतादेवी को पा अयोध्यापुरी लौट आये एव पुण्यात्मा भाई भरत शत्रुघ्न से पुन मिले। वे इसी स्वामितीर्थ के प्रभाव से अपना पहला राज्य पा कर राज्याभिषिक्त हुए।

१० वैकुण्ठ गुहा का प्रभाव।

वैकुण्ठ नामक गुहा मुनियो एव योगियो के लिये दुर्ज्ञेय है। परमात्मा के मायावश वह देवताओ से भी दुर्ज्ञेय है। वैकुण्ठ ही विष्णुभगवान ने लीलावश वानरो को दिखाया था। उस गुहा मे जो शखचक्रगदाधारी दिखाई पडे थे वे परमानन्दरूप परमभक्त तथा सदा नित्य पुरुष थे। वे सदा ब्रह्मानन्द का अनुभव करते है और कामरूप से भगवान के साथ सचरण करते है। सदा भगवान का कैंकर्य करते है। वे वेंकटाद्रि के आश्रम मे रहा करते है। उस पर्वत के ऊपर जब जनसमूह आ जाता है तब वे इसी पर्वत–गुहा मे निवास करते है। वानरो को उस गुहा मे वैकुण्ठ के दिखाई पडने के कारण वह 'वैकुण्ठगुहा' के नाम से विख्यात हुआ। (वराह पु० ४२ अध्याय)

११ रावणादि दैत्यों से पीडित ऋषियों का श्रीमहाविष्णु की खोज करना।

पहले किसी समय मे जाबालि, कश्यप, गौतम, अगस्त्य वामदेव, शतानन्द आदिमुनि तथा सनकादि योगी, इन्द्रादि देवता हिरण्यकशिपु के वशज दुरात्मा दैत्यो से पीडित होकर विष्णुभगवान के निकट अपने कष्टो का निवेदन करने के लिये निकले। परम अन्यय विष्णुजी को खोजने के लिये क्षीरसागर के उत्तरी तीर पर जाकर वे श्रीजनार्दन भगवान की अनेक स्तोत्रो से स्तुति करने लगे।

कुछ समय पश्चात शख चक्र गदाधारी कोई वकुण्ठवासी प्रत्यक्ष ह मनियो से कहने लगा – सुनिये हे मुनियो ! आपलोग यहा किसलिये आये लक्ष्मीपति यहा नहा ह । पृथ्वीतल म किसी पवत पर रहते ह । आप सब स्थान को जाइये " । यह कहकर वह अदश्य होगया ।

तत्पश्चात शीघ्र ही उस स्थान से लोट कर सब सुरश्रेष्ट इकट्ठे ह विचार करने लगे कि किस कारण से कमलापति भगवान क्षीरसागर को छो पृथ्वी पर निवास करते ह ? भूलोक म जाते समय रास्ते म वकुण्ठ से आते स्फटिक के समान चमकनेवाली महती नामक वीणा को बजाते हुए कपूर की धू धूसर शरीरवाले, तिलक से प्रकाशित शरीरवाले श्रीनारद जी को देखकर वे लगे – हे नारद मुनीन्द्र ! आप कहा से आते ह ? आप तीनो लोको के जा ह अत आप से कोई बात छिपी नहीं है । आप कृपया बतलाइये कि लक्ष्म किस स्थान म रहते ह ? रावणादि दत्य मुनियो योगियो, तपस्वियो तथा मनुष्य अनन्त कठिन पीडा देते ह । इन दुष्टो का महाबल विष्णु ही निग्रह कर सक दूसरा असमर्थ है । हमलोग उन्हीकी शरण म जाते ह । यह सुनकर नारदमु ऋषिजनो को अभ्यर्थनाकर कहने लगे– ' म भी नारायण को देखने परम धाम गया था । वहीं मुझसे किसी ने आकर कहा कि ' पृथ्वी में ही किसी पवत पर भग लक्ष्मी के साथ सानन्द रहते ह ' । यही बात सुनकर हम भी यहा आये ह । अ सब मिलकर ब्रह्मलोक चल । सारे ससार के पितामह ब्रह्माजी ही सब कुछ ह " । यह समाधान देकर नारद जी सब को ब्रह्मलोक ले चले । वे सब अमित ते ब्रह्मलोक मे पहुचकर चतुमख चतुर्बाहु प्रज्ज्वलित अग्निरूप तथा मूर्तिमान वे समस्तशास्त्ररूप गायत्री सावित्री सरस्वती तीनो महादेवियो से सेवित तथा दिग्पालो से सुसेवित परमोत्तम आसन पर बठे हुए श्रीब्रह्माजी को देखने लग किन्नर, नाग, गधव, सिद्धसघो से सेवित तथा मूर्तिमान वेदवेदा तशास्त्र समुद भी सेवित थे । उनके निकट पहुचकर सबो ने प्रणाम किया । चतुमख के स कुशलादि पूछने के पश्चात वे लोग ये वचन बोले – 'हे प्रभो ! आप ही की से हम सबका कुशल मगल हो रहा है । परन्तु इस समय दुष्ट रावण की बाध दत्यगण मिलकर सभी धर्मानुष्ठानतत्पर तपस्विगणो को अनन्त बाधा देते तपस्या के नाश के डरते हुए वे किसी तरह दत्यो के उपद्रव तथा बाधाए रहे ह । लेकिन अब वे उन बाधाओ को सहन म सवथा असमथ ह । अ मायावी भगवान विष्णु ही जो सब प्रकार के उपायो को करने म कुश उनका नाश कर सकते ह । किन्तु तीनो लोको म हम लोग उस सवशक्ति परमात्मा को नहा देख सके । अब आप ही हम लोगो की गति ह । आप लोगो को इस महाभय से बचाइये । " (वराह पु० ४३ अध्

१२ देवर्षियों का ब्रह्माजी के साथ वेंकटाचल पर आना।

तब ब्रह्माजी ध्यान लगाकर देवताओं से रावण का वृत्तान्त इस प्रकार बोले — प्राचीनकाल में रावण ने परम घोर तथा अत्यन्त उग्र तपस्या की थी और उस तपस्या से किसी के द्वारा न मरने का वरदान पाया था। परन्तु उसने विमोहित होकर मनुष्यों से अपने वध की संभावना नहीं समझी। इसका उपाय हम बतलाते हैं कि श्रीविष्णुभगवान ही इसकी गति हैं और वे तो पृथ्वी पर ही वेंकटाचल पर रहते हैं। दैत्यों के समूह का नाश करने के लिये वे ही हम सबके प्रार्थना योग्य हैं। मैं भी आता हूं, आप लोग शीघ्र चलिए। पर उनके दर्शन शीघ्र नहीं हो सकते अतएव उनको इधर उधर खूब खोजियेगा। आप लोगों को विशेषरूप से नदी पहाड़, घाटी तथा झरनों में ढूंढना पड़ेगा। उनका अत्यन्त प्रियतम पर्वत वेंकटाचल है। वहां वे सुग्गे पक्षी मृगादि का रूप धारण कर रमादेवी के साथ क्रीडा करते हैं। उस पर्वत की प्रदक्षिणा विधि से उस पर्वत में उन्हें ढूंढना पड़ेगा। इक्ष्वाकु वंश में महापराक्रमी राजा दशरथ हुए हैं, वे पुत्र की इच्छा से वेंकटाद्रि की स्वामिपुष्करिणी के तट पर परम उत्तम तपस्या करेंगे। उनको श्रीपति अपना स्वरूप दिखलायेंगे" ये वचन सुनकर ब्रह्माजी के साथ साथ सभी देवर्षि ब्रह्मलोक से निकले। उन्होंने शीघ्र ही जाकर शेषाचल को देखा। वहां उन्होंने अपने परिश्रम तथा थकावट को शान्त किया। तत्पश्चात शिखरों तथा वनों में घूमते हुए पवित्र जलवाली नदियों तालाबों बावलियों, सरों झरनों तथा पुष्करिणियों में स्नान करके भगवान श्रीनिवास की फूलों से सविनय पूजा कर अमृतमय फलों का नैवेद्य चढ़ाया था। पर उन्होंने वहां न तो कोई देवता, न कोई मन्दिर और न कोई गोपुर देखा।

१३ पुत्रार्थी राजा दशरथ का वेंकटाद्रि पर आना।

उस समय धर्मात्मा महाराज दशरथ अयोध्या में रहते हुए पृथ्वी मण्डल पर राज्य करते थे। बहुत काल व्यतीत होने पर भी हंसते हुए मुखवाले पुत्र को देखने का भाग्य उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। उन्होंने वंशोद्धारक पुत्र के न होने पर बहुत चिन्तित एवं दुःखी होकर अपने गुरु वसिष्ठ महर्षि से कहा — "ब्रह्मन्, आप इस महावंश के प्रधान पुरोहित हैं। बहुत दिनों से लालायित रहने पर भी अपने किसी पुराकृत महापाप के कारण मैं पुत्र को न पा सका। उस पाप की निष्कृति कैसे होगी और किस प्रकार मुझको पुत्र होगा?" यह सुनकर भगवान वसिष्ठजी ने क्षणमात्र ध्यान करके राजा से कहा — 'हे राजेन्द्र! पुण्यश्लोक! आप से पाप कैसे हो सकता है? तथापि आपको पुत्र प्राप्ति में बाधा देनेवाला

कोई पाप मझ ध्यानदृष्टि स मालूम पडता है। उस पाप की शान्ति तथा प्राप्ति के लिय वकटाधीश लक्ष्मीपति की सेवा कीजिय।" यह सुनकर राज पूछा कि 'हे प्रभो! वह श्रीपति परमात्मा इस समय कहा मिलेंगे? मझे सव-यापो के किस पकार दशन होग?" इस प्रकार महाराज से पूछे जाने वसिष्ठजी पुन बाल – "हे राजन! सुनिय भागीरथी के दक्षिणभाग म दो याजन की दरी पर 'वकट नामक पवत है। सुवणमखी नदी के उत्तरी तट ओर करीब एक कोस पर अनक पुण्य जलाशयो से सम्पन्न यह पवत अत्यन्त f तथा परम अप्राकृत है। श्रीनारायण तथा अन्य वकुण्ठवासी देवो को यह प अत्यन्त अधिक प्रिय है। उसी पवत पर लक्ष्मीदेवी क साथ श्रीनिवास f रहते ह और उनके दशनाथ शद्ध मनिवन्द वही यज्ञ करते ह। देवता और य तपस्या करते ह। स्वय भगवान ब्रह्माजी लोक के उपकाराथ उसी पवत पर म तपस्या करत। परमात्मा हरि अपना विराटरूप उनको दिखायेंगे और स अपन दशन से ही अभीष्ट फल प्रदान करेंगे। आपका अभीष्ट भी यहीं होगा।' वसिष्ठजी के वचन सुनकर दशरथ प्रसन्नचित्त हो उनके साथ वेंकटा पर गय। वहा क पुण्यतीर्थो में स्नान करके वाह्याभ्यतर शद्धि को प्राप्त निमल तथा पापरहित होकर सुत प्राप्ति की प्रतीक्षा म वहा कुछ स तक रहे। (वराह पु० ४४ अध्या

१४ स्वामिपुष्करणी तट पर तप करते हुए मुनियो को दशरथ का दशन।

एक दिन दशरथजी वसिष्ठजी के साथ वकटाद्रि पर सचार करते स्वामिपुष्करिणी के तट पर आय। अनक कमल कल्हारादि पुष्पो एव जल चरो से शोभित उस पुष्करिणी को देखकर अत्यन्त आनन्दित हुए। उन्ह उस पुष्करिणी के तट पर तपस्या करते हुए अनक मुनियो को देखा जिनमे कोई वीरासन, कोई पद्मासन, कोई भद्रासन कोई स्वस्तिकासन पर बठे हुए कर रहे थे। पुन कोई पण भक्षण और कोई वायु भक्षण करते हुए तप क रहे थे। कितने ही योगी कुभक रेचक पूरक के द्वारा प्राणायाम करते थ कोई होम कर रह थ। कुछ श्रीनिवास की पूजा कर रहे थ। कुछ विष्णभगव की आराधना कर रहे थ। कुछ ब्रह्मादि तारक मत्रो का जप कर रहे थ। र मनीश्वरो के बीच में व्याघ्राम्बर पर ध्यान योग में श्री ब्रह्माजी समासीन थ उन सबको देख यथारीति प्रणाम कर विस्मितहृदयवाले महाराज दशरथ र रह गय। (वराह पु० ४५ अध्याय

१५ श्रीभगवान का आविर्भाव ।

महातेजस्वी वसिष्ठजी ने महाराज दशरथ से कहा – "हे राजन देखिये यहा ब्रह्माजी मुनियो के साथ परम उग्र तपस्या कर रहे है, जिससे निश्चय ही श्रीमहाविष्णु बहुत शीघ्र यहा आविर्भूत होंगे । अत आप भी इस पुष्करिणी के जल मे स्नान कर, पवित्र हो जप करते हुए यहीं निवास कीजिये ।" यह सुनकर महाराज दशरथ ने कहा – "हे प्रभो ! मै ऐसा ही करूगा । कोई मत्र बतला दीजिए । इसपर वसिष्ठजी ने दशरथ को परम उत्तम वेंकटशाष्टाक्षरी मत्र का उपदेश दिया । राजा इस महामत्र को स्वीकार कर स्वामिपुष्करिणी के जल में विधिवत स्नान कर एक पवित्र स्थल पर आसीन होकर उस मत्र का जप करने लगे ।

कुछ समय के पश्चात कोई बडे जोर की आवाज हुई । सभी मुनिगण चकित होकर कि यह क्या हुआ इधर उधर देखने लगे । उन्होने एक परम दुर्निरीक्ष्य महातेज पुंज को देखा जो ऐसा मालूम होता था मानो करोडो सूर्य और अगणित चन्द्रमा एक ही साथ उग गये हो । उस तेज से ठीक वैसा ही प्रकाश उत्पन्न हुआ । उस प्रकाश को देखने मे अशक्त होकर सबने आखो को बन्दकर लिया । उस अद्भुत तेज से सारा ससार प्रदीप्त हो गया और उस तेज के बीच सूर्य के समान चमकवाला एक दिव्य तथा परम अद्भुत विमान सब देवताओ ने देखा जिसमे अनेक गोपुर तथा प्रावरण लगे थे और जो तपाये हुए सोने के कवाटो से शोभित नीलम एव मरकतो के तोरणो से सुसज्जित सुवर्णमय कुम्भो से सजे गोपुरयुक्त वितान से मण्डित, मुक्तदाम की झालरो से रंजित, पुष्पमालाओ से मण्डित, क्रीडा मण्डपयुक्त, सभा मण्डप के मणिमण्डप युक्त, हजारो स्तभवाले मण्डपो से अलकृत रथ, अश्व गजादि अनन्त दिव्य सवारियो से परिपूर्ण भेरी मृदग पणव, मुरज आदि वाद्य ध्वनियो से गुंजायमान, ढाक नगाडे आदि के शब्दो से दिगन्त मुखरित, रूप यौवन सम्पन्न दिव्य रमणियो के लास्य से सुशोभित, श्रवणानन्दप्रद हृदयाह्लादकारक, नयनानन्ददायक, सर्वमगलमय तथा अत्यन्त अद्भुत था । ब्रह्मादिदेवता सनकादियोगी, अगस्त्यादि ऋषि उस परम अद्भुत विमान को देखकर आनन्द विह्वल हृदय से विस्मित एव किंकर्त्तव्यविमूढ होकर चुपचाप स्तब्धभाव से खडे ही रह गये । पक्षी तथा थलचारी मृगादि पशु सभी उस दिव्य विमान को देखकर विस्मय विस्फारित नेत्रवाले होकर उस स्थान से एक पग भी न चल सके, सबके सब वहीं निश्चेष्ट रह गये । उस परम अद्भुत विमान को देखकर श्रीब्रह्माजी परमानन्द से परिपूर्ण हुए और मुनियो से यो बोले –

" इद तु वि य परमाद्भत शभ
विमानमिन्द्रादिभिष यमाणम ।
विभाति वि णोरिव मन्दिर पर
पश्यान सर्वे बयमदभत गहम ।।

हम लोग जो यह परमदि य ादभत इन्द्रादि से सवित शभ विमान देखते ह वह विष्ण का परम धाम अदभत गह वा विष्ण मंदिर ह" । यह कहकर पितामह ब्रह्माजी तथा सभी देवता तपोधन ऋषिव द उस विमान गह म प्रविष्ट हुए ।
(वराह पु० ४६ अध्याय)

१६ विमान मे प्रविष्ट होकर ब्रह्मादिकों का श्रीनिवास के दर्शन करना ।

चण्ड प्रचण्ड नामक द्वाररक्षकों को प्रणाम कर ब्रह्मादि देवता महाराज, दशरथ के साथ सातों द्वारा को पार करके बहुत विस्तत एव सिद्धचारणों से सवित विमान म श्रीपति का दखकर अत्यन्त स तुष्ट हुए । पश्चात वहा बहुत पुष्पवष्टि हुई तथा देवदुन्दुभि से निकला हुआ रम्य एव मगलमय महान शब्द उसम भर गया । यह सुनकर अष्टवसु लोकपाल सभी ग्रहगण, रुद्रगण, नाग यक्षादिगण भी जचरन को दशन वहा आय । श्रीविष्णभगवान के दक्षिण भाग में कमलासन पर बठी हुई, तपाय सोन की पकजादरशोभाधारण किये, शरत्कालीन पूणचन्द्र के समान मखवाली भ्रमरपक्ति के समान दिव्य केशपाश यक्त, खिले हुए कमल के समान हास्य युक्त उ ज्वल मखवाली बालरवि तथा किंशुक के समान लाल पोशाक पहन किरीट हार मकुट, केयूर, आदि सदभूषणा से सुसज्जित बाय हाथ म नील कमल धारण किय लम्बमान दक्षिण हाथवाली, बार बार कटाक्ष से श्रीवत्सलाछन भगवान को देखनवाली श्रीलक्ष्मीजी को ब्रह्मादि देवर्षियो न देखा । पुन वामपार्श्वस्थ तुलसी के समान श्यामलागी सर्वाभरण-भषिता श्रीभूमिदेवी को भी देखा जो चन्द्रमा की उज्ज्वल ज्योत्स्ना के समान मन्द मन्द हसती हुई मदमत्त चकोर क समान ाखवाली, खिले हुए कमल के समान मखवाली दाहिन हाथ म नील कमल धारण किये स्वण कमल पर बैठी हुई बारबार अनपमेय लोकेश भगवान का देख रही थी जो अनक रत्नो से जटित तेजयुत मुकुट धारण किये मन्द मन्द मुसकान युक्त, दयारस परिपूण नत्रवाले थी । दोनो काना म सुवणनिर्मित मकराकृति कुण्डल धारण किय कण्ठ के नीचे लटकते हुए गले के आभषणा स सुशोभित तपाय सोन का बना यज्ञोपवीत पहने, केयूर आदि सदभूषणयक्त भजावाले चमकते हुए हजार धारवाले सुदशन चक्र लिये हुए शरच्चन्द्र के समान उज्ज्वल प्रकाशवाले पाचजन्य को धारण किय हुए,

कमर मे किंकिणीदार कमरधन पहने हुए वहीं एक कटार लगाये हुए, पीताम्बर धारण किये हुए घटनो मे सुन्दर घघरू आदि भूषण पहन, हसी के समान मधर शब्द करनवाले पायजब नूपुर धारण किये हजार दलवाले पीढे पर बठे हुए, सर्वाभरणभूषित पच्चास वष के कुमार के समान क्रीडा करने में निरत रहनेवाले, दया क्षमा महोदाय, आदि गणो के मूर्तिरूप अनादि अ यय, पुरुषोत्तम नारायण को देवता आदि सबने देखा। नयनानन्दकारक भगवान को देखकर सबके नत्र हर्षावेश स विस्फारित हुए। ब्रह्मादि देवताओ अगस्त्यादि ऋषियो सनकादि योगियो तथा दशरथ ने भगवान को देखकर उनकी कई प्रकार से स्तुति की थी।

(वराह पुराण ४७ ४८ अध्याय)

१७ भगवान विष्णु से ब्रह्मादि देवताओं के द्वारा रावण का उपद्रव वर्णन।

श्रीवकटाधीश ने मुनिगण तथा देवताओ से स्तुत्य तथा सन्तुष्ट होकर उनके आगमन का कारण पूछा। तब लोक के पितामह ब्रह्माजी ने इस प्रकार कहा – पूर्वकाल में विश्रवस का पुत्र रावण नाम का राक्षस घोर तपस्या कर, मनुष्यो को छोड देवता दानव ओर राक्षसो स न मरने का वर पा बल के दर्प स तपस्वियो ओर मनुष्यो को विशेष दु ख दे रहा ह। कोई कोई महावेग दत्य शेषपवत के निकट बलोद्धत हो नित्य मुनियो को सताते ह। उनसे त्राण पाने के लिये हम आपकी शरण म आये ह। वकुण्ठधाम क्षीरसिन्धु म आपको न देखकर हम सब यहा आये ह। आप दिव्य चत्ररथ स अधिक सुन्दर इस पवत पर प्रसन्न चित्त स क्रीडा रस वश ही रमने ह। तो हमलोगो की कोन सी गति होगी? हमारा रक्षा कीजिये। यह सुनकर दया सागर श्रीमन्नारायण न कहा – "हे कमलासन! भय मत कीजिये। आप लोगो की रक्षा हम करेंगे। बहुत जल्दी ही लोक कण्टक क्रूर रावण का सब ध अवश्य वध करूगा। इस प्रकार श्रीब्रह्माजी को समझाकर तपोधन श्रीअगस्त्यजी से कहने लग"–हे "महामुनि अगस्त्यजी! आपया अपने आने का कार्य प्रकट करे'। यह सुनकर परम पवित्र मुनिवर कहने लगे– हे वकटश! आपके पुण्य दर्शन ही हमारे उद्देश्य होते ह। श्रीशल के निकट अनेक राक्षस उत्पन्न हो गये ह। वे सब वरदान पाकर मदोन्मत्त हो प्राणियो को सदा पीडा दे रहे ह। यहा आपके होते हुए इस प्रकार पीडा होना ठीक नहीं ह। यह आपका देश ह। आपकी प्रजा इस प्रकार दत्यो से पीडित हो रही ह और आपको इस प्रकार उपेक्षा करना उचित नही ह। आपकी कृपा से आपके देशवासी सबलोग नीरोग ओर निरुपद्रव हो'। यह सुनकर भगवान ने कहा – "हे मुनिश्रेष्ठ! भय मत कीजिये। सब दुष्टो को मारकर अपने देशवासी सबलोगो

को आरोग्य सम्पत्ति, शतायु पुत्र पौत्रादि सब कुछ प्रदान करूंगा '। फिर श्रीनिवास न सनकादि योगियों को देखकर कहा – "आपके आगमन का कारण क्या ह ? ' योगी लोगो न एसा कहा – "हे स्वामिन ! हमे क्या चाहिय ? आप अदश्य होकर ही रहते ह तो इससे क्या प्रयोजन ? हमारी प्राथना ह कि आप सबको दष्टि गोचर होकर रहे । यही हमारी आ तरिक अभिलाषा ह ' । 'ऐसा ही होगा एसा कहकर भगवान न इन्द्र स कहा कि "आपका क्या उद्देश्य ह कहिय '। विष्णु के पूछन पर देवन्द्र ने इस प्रकार प्राथना की – "हे गोविन्द ! दुरात्मा रावण स पीडित होकर हम सबलोग एक स्थान से दूसरे स्थान को मारे मारे फिरते ह । कृपया उसका वध कीजिए । इन्द्र के इस प्रकार कहन पर कमलापति न उसस कहा कि ' आपलोग निभय होकर शान्त होवे । म लोककण्टक रावण को शीघ्र ही मारूंगा । एसा कहकर कमलापति न हसते हुए महादेवजी स कहा – हे शकर जी ! आप अपन शभागमन का कारण शीघ्र बतावे '। यह सुनकर श्रीशकरजी भगवान स साथक वचन कहन लग – ' हे वकटश ! जहा आप सवदा रहते ह वहा म भी रहूँ " । यह सुनकर श्रीभगवान न कहा – म इसी वकट पवत पर कल्पान्त पयन्त निवास करूंगा । अतएव आप भी यहीं पर इसी उपत्यका के ईशान कोण म रहिय ' । भगवान एसा आदेश देकर कोसलेश राजा दशरथ स कहन लग – हे राजन ! आपको क्या चाहिय ? भगवान के पूछन पर महाराज अपनी मनोगत कामना कहने लग– हे स्वामिन ! आपकी कृपा स आनन्द पूवक बहुत दिन राज भोग किया । ब्राह्मणो को धन दान कर पुण्य कमाया । परन्तु पुत्र सुख का कुछ भी अनभव नहीं किया । पुत्रहीनो को पुण्य लोकप्राप्ति नही होती । मझे वशवधक पुत्र प्रदान कीजिए । यह सुनकर वकटाधिप भगवान न राजा से कहा – राजन ! तुमन पूव जन्म म अनको घोर पाप किय ह । इसलिये पुत्र प्राप्ति नहीं हुई तो म क्या करू इस पर राजा न कहा – 'हे भगवान यह क्या ह ? अचरज की बात ह । आपके दशन से मेरे सब सचित पाप विनष्ट हो जाते ह ।

'क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दष्ट परावरे ।'

इस प्रकार श्रुति कहती ह । सूय के उगने पर अधकार किस प्रकार रह सकता ह ? आपके दशन हो जाने पर अब और पाप रह कहा गया ? इतना कहने पर भगवान न उसकी भक्ति पर प्रसन्न होकर कहा – "हे राजन ! म तुम्हारी भक्ति से परम प्रसन्न हुआ । तुमको प्रभावशाली, परम बलवान पराक्रमी तथा विख्यात चार पुत्र होग । तुम अयोध्या जाकर श्रद्धापूवक यज्ञ करो ।' यह वचन सुन राजा परम पुलकित हुए और श्रीनिवास की प्रदक्षिणा स्तुति तथा नमस्कार करके उनकी आज्ञा ले श्रीवसिष्ठ महर्षि समेत सभी बान्धवो के साथ अयोध्या चले गये ।

(वराह पु० ४९ अध्याय)

१८ ब्रह्माजी की प्रार्थना मानकर वेंकटाद्रि पर सर्वजन—प्रत्यक्षगोचर रहने के लिये भगवान का सहमत होना।

इस प्रकार राजा दशरथ को वरदान देन के बाद कमलापति भगवान ब्रह्माजी को देखकर कहने लगे – हे ब्रह्माजी ! अब आप क्यो ठहरे हुए ह ? पका समय तो बहुत व्यतीत हुआ। कहिये, आपकी क्या अभिलाषा ह ? अत्यन्त शीघ्र उस वरदान को दूगा।" यह सुनकर चतुरानन श्रीब्रह्माजी बोले – हे वकटेश ! यदि आप मुझे अभीष्ट वरदान देना चाहते ह तो सुनिये, गा। आपका इस प्रकार अगोचर रूप स रहना मुझ उचित प्रतीत नही होता। कलियग म सब मनष्य हमारी भाति तपस्या करके आपके दशन नही पा गे। इस कलिकाल म लोग धम या अधम कुछ भी नही जानते। प्राय सभी ल, रोगी तथा कामी होते ह। वे पशु के समान अपने हिताहित का ज्ञान रखते ह। यदि आप उनकी उपेक्षा करग तो सभी रौरवादि नरक उनके य पर्याप्त नही होग ओर भी हजारो नरक बनाने पडग। इसलिये हे दयाद्र य ! आप ही को उन पर अनुग्रह करना चाहिये। उनको दशन देकर, दशन के रा उनके पापो का नाश करते हुए आपको इसी पवत पर सदा निवास करना हिये। यही मेरी कामना ह। यह सुनकर श्रीवकटेश्वर जी बोले – ' ह मुख ब्रह्माजी ! आपने यह सर्वोत्तम वर मागा। सब जीवो पर आपकी अनन्त परम धन्य ह। अत म आपसे अत्यन्त प्रसन्न होकर यह वरदान देता ह आपके इच्छानसार सब जीवो के अभीष्ट पूर्ण करन के लिये प्रत्यक्ष रूप स पवत पर श्री भूदेवियो सहित निवास करूगा। जो कोई इस पवत पर किसी र की तपस्या करगे, उनकी तपस्या यज्ञादि कम तथा योगियो के सभी र के योग, सभी अतिशीघ्र सुलभ माग से ही यहा सिद्ध होग। यह जो मिपुष्करिणी ह वह सब तीर्थो का स्वामि होन के कारण यथाथ रूप स उक्त नाम सिद्ध हुआ। पथ्वीतल पर गगा आदि जितने पुण्य तीथ ह वे सब इसी तीथराज उत्पन्न हुए ह। यहा स्नान करन से करोडो महापाप नाश हो जाते ह। जो इस व में जिस जिस अभिलाषा की पूर्ति के उद्देश्य स स्नान करेंग उनकी सभी नाए अवश्य परिपूर्ण होगी – इसम सशय नही ह। जो अत्यन्त भक्ति पूवक र इस पुष्करिणी म स्नान करके मेरे दशन करेंग उनकी सभी अभिलाषाए पूर्ण – इसम सन्देह नही ह। इसलिये सब लोग निभय रह।" यह सुनकर प्रसन्न श्रीचतुमुख फिर बोले – ' हे स्वामी ! मझपर अनग्रह करके यहा रह कर लोगो उद्धार करना स्वीकार किया। कि तु इस प्रान्त म दुष्ट दत्य लोगो को पीडा द ह। उनका सहार कर लोगो की रक्षा कीजिए।" तब श्रीवकटाधीश जी न श्रीसुदशन को सपरिवार भजकर उन सब दुष्टो का निश्शेष अन्त करवाया।

१९ भगवान का ब्रह्मोत्सव स्वीकार करना।

श्री ब्रह्माजी को अपन लोक म न जाकर वहो खड हुए देखकर श्रीव टश्वरजी ने कहा – अब ओर क्या चाहिय। आप बतलाव '। एसा पूछन श्री ब्रह्माजी प्रसन्न होकर बोले – " हे स्वामी ! मेरी एक ओर अभिलाषा ह। उस भी आप कृपया सम्पूण कर। इस स्थान पर ध्वजारोहण स आरभ कर आ निमित्त एक महोत्सव मनायग कृपया आप उस श्रीलक्ष्मीजी के साथ स्वी करे । अच्छा करो एस भगवान की आज्ञा पाकर श्री ब्रह्माजी न प्र आरभकिया।

श्री ब्रह्माजी न कन्याराशि म सूय के आन पर वखानसादि मन्यो बलाकर उत्सव मनान का सकल्प करके सब दिशाओ स सुरजनो का ३ मि किया। योगियो को भी अगम्य परात्पर भगवान न सब जावो के ऊपर दया दष्टिगोचर होते हुए श्री ब्रह्माजी क किय हुए महोत्सव को स्वीकार किय महोत्सव मे " श्रीनिवासजी के दशन महा पुण्यप्रद एसा कहते हुए सब देश मनुष्य सपरिवार निमन्त्रित होकर गोविन्द गोविन्द नाम घोष करते हुए आ वकटाद्रि पर चढ। माग म उत्सव म जानवालो के लिय लोगो न पानशार और अन्नशालाए बनवायी। उन्ह वाहन छत्र, वस्त्र ओर पादुकाए समर्पित लोगो ने पुण्य कमाया।

श्री ब्रह्माजी ने विश्वकर्मा को बलाकर उत्सव म आय हुए लोगो आराम के लिय अगणित अन्नशालाए जनवास ओर पानशालाए आदि अ बनवाये। वकटाद्रि के चारो ओर नगर निर्माण किया। श्रीवकटश्वरस्वामीज विमान के चारो ओर सुन्दर वीथिया बनवाकर गन्धवनगरतुल्य शहर उस प पर बसवाया। ब्रह्मोत्सव के समय गन्धव और किन्नरो ने सुन्दर सुन्दर गीत तथा अप्सराओ न हाव भाव के साथ नत्य किया। सारा नगर भरी मदग अ वाद्यध्वनियो स गूज उठा। (वराह पु० ५० अध्य

२० श्री वेकटेश्वरजी का महोत्सव वैभव।

श्री ब्रह्माजी ने श्रीवकटेशजी के दिव्य महोत्सव के दिनो में अनेक प्रका भोज्य पदाथ – घत, दाल गुडादिको के विचित्र विचित्र नवेद्य, गड का मूग की खिचडी तिलका भात धान भात मिरच भात गहू का भात, उडद भात मीठा भात पायसान्न एस ही घी स परिपूण अनक प्रकार के भात । बहुत प्रकार के अन्न भाति भाति के फल आदि स्वादिष्ट रसयुत पदाथ चढा

ञ्च श्रवा नामक घोडा और एरावत नामक हाथी शष नाग गरुड इन चारो ाहनो म स एक एक पर वेंकटाद्रि के शिरोमणि श्री वकटशजी श्री लक्ष्मीजी के ाथ बहुमल्य वस्त्राभषणयवत समस्त वाद्य घोषा स, ध्वजा पताका चामरो की क्तिया एव नाचन गानवाली सुन्दरियो के साथ कवि गायक पाठको द्वारा नत्य वदो स स्तुति किये जाते हुए वीथय। म जाकर उत्सव दशनाथ आय हुए वताओ पर कृपा करते हुए सवित हुए। यज्ञशालाओ म मनियो न खब होम कया तथा मनोहर पूणकुभो को यथाविधि स्थापित किया। तपस्व। वखानसो न ग्पालो को विधिवत बलिप्रदान किया। श्रीनिवास भगवान के पवित्रोत्सव के न परम पुण्यप्रद तथा पाप विनाशक ह" – एसा समझकर आय हुए सब लोगो अनक प्रकार से दान किया। वहो रहन के उद्दश्य से अनक लोगो न निवास ना लिये। इस महोत्सव म किसी दिन नानारत्नविभूषित ऊचे ऊचे ध्वजावाले द्धग धव सवित रथ पर श्रीभूदेवियो के साथ श्रीनिवासजी बठे हुए ब्रह्मादि वतागण तथा तपस्वी बन्दो से सवित हो राजपथ तथा महावीथियो का चक्कर गाकर फिर सभा मण्डप म आकर विराजमान हुए।

२१ श्री वकटेश्वरजी के महोत्सव का सेवाफल।

कल्मषरहित श्रीब्रह्माजी को बलाकर श्रीनिवासजी इस प्रकार मीठी मीठी ात कहने लगे – 'हे सरस्वतीवल्लभ! आपकी आन्तरिक भक्ति एव इस होत्सव से म बहुत प्रसन्न हू। इस प्रकार देवता, योगी मुनि, मनुष्य मे जो ाई प्रतिवष इसी मास म कन्याराशि म सूय के आन पर यह ब्रह्मकल्पित होत्सव करता ह वह ससार मे अपन सकल अभीष्ट तथा मनोरथ प्राप्त कर ब्रह्मलोक म जाता ह। जो कोई इस उत्सव के उद्दश्य तथा भगवत सेवा तथा क्ति के निमित्त शषाचल जाने के लिये एक पग भी चलता है उसको उसी ा के फलस्वरूप मेरा पद प्राप्त होता ह। इस उत्सव काल में जो कोई नशाला बनाता ह उससे मेरा चित्त अत्यन्त प्रसन्न तथा शीतल हो जाता ह। ो इस उत्सव के समय अन्नदान करग उनको सात कुलो तक अनेको प्रकार के ज्ञादि हम प्रदान करते है और स्वग मोक्ष प्रदान करगे। शास्त्रो म जितने कार के दान लिखे गये ह वह सब यहा किय जाय तो ऐहिक तथा स्वर्गादि भीष्ट फल देकर शरीरान्त म उनको अपना पद भी दूँगा। इस पवत के चारा फ जो नगर निर्माण करता ह वह मोक्ष प्राप्त करेगा। जो कोई यहा भमिदान ग्दान करेगा वह मेरे लोक को अवश्य पाता है। जो विद्वान यहा निवास रनवालो को उत्तम विद्यादान करते ह उनको त्रलोक्य व्यापिनी कीर्ति भी प्त होती ह।'

(वराह पुराण ५१ अध्याय)

२२ वकटाद्रि पर पुष्पोद्यान बनाकर पुष्पार्चना करनेवालो को प्राप्त होनेवाला फल ।

श्री वकटश्वरजी फिर बोले – हे विद्वद्गण ! म फिर कहता हूँ अ सुनिये, जो कोई यहा उत्तम तुलसी वन या अनक सुन्दर सुगधित फूल फल व वक्षो की फुलवाडी लगाकर उनके फूलो से मेरी पूजा करते ह वे अनक वष भूल के सुखा का अनुभव कर मोक्ष पायग । उनके वश की ससार म अभिवद्धि होग प्रतिदिन मझको जो न्यानादि के साथ नवेद्य चढाते है वे ससार म बड पुण्यशा होते ह । उन्ह समस्त प्रकार की सम्पत्ति प्राप्त होगी । पथ्वीतल पर जो पुण्य वज्रमणि का जटित स्वर्णाभूषण अपण करते ह उनका रूपवान लावण्य विद्वान धार्मिक परम दीर्घायु पुत्र एव अनन्त सम्पदाये मेरी इच्छा से अनायास प्राप्त होती ह । मेरी पूजा के लिय जा पुष्प एव तुलसीदल की मालाए बना समर्पित करते ह उनके गह म म लक्ष्मी क साथ सदा निवास करता हू । यहा जो उपस्थित ह और उन की जो जो इष्ट कामनाए ह वह सब कुछ म अव प्रदान करता हू – यह मेरी प्रतिज्ञा हे । नियम से जा यहा रहते ह अथवा यदच्छ जो यहा आते ह और जो इस वेक्ट पवत पर चढ कर स्वामिपुष्करिणी के जल स्नान कर मझ प्रणाम करते ह वे सदा सफल मनोरथ होग । इस प्रकार प्रदान करके श्रीवेकटाधीशजी न श्रीलक्ष्मी तथा श्रीभूदेवियो के साथ अपन दिव्य रत्न तोरण युक्त विमान म प्रवेश किया । ब्रह्मादिदेवो, ऋषियो मनियो न प्रसन्न मनसे एकत्रित होकर जय जय कार ध्वनियो से स्तुति क श्रीब्रह्माजी न ऋषियो और तपस्वियो के साथ शास्त्रविधि से श्रीवेकटशजी दिव्य मगल उत्सव बड समारोह से मनाकर परिसमाप्त किया ।

२३ महोत्सवावभृथस्नान ।

श्रवण नक्षत्र म कमलासन श्रीब्रह्माजीने पवित्र तथा पाप विना स्वामिपुष्करिणी के जल म श्री वेकटेशजी का अवभथस्नान कराया । देवता योगियो मुनियो तथा राजाओ न भी पुष्करिणी म स्नान किया ।

स्नानोत्तर योगिप्रवर श्रीसनकजी सब को लक्ष्य कर इस प्रकार बोले – महाजनो ! सुनिये, चक्रधारी श्रीभगवान के इस पुण्यमय महोत्सव के अवभथ म स्नान करते ह उनके अन्यान्य अनत जन्मो मे किये हुए सभी महापाप तत्क्षण नष्ट जाते ह । श्रीविष्णु तथा महेश्वरजी ने तथव अर्थात एसा ही हो कह कर बात मान ली । सब देवताओ ने पुष्करिणी की बहुत प्रशसा की और नानाभांति दिव्य सुगधित पुष्पा से श्रीवेकटश जी की पूजा करके उनको साष्टाग प्रणाम कि

ब्रह्माजी के द्वारा व्यवस्थित इस उत्सव से प्रसन्न होकर श्रीविष्ण न उनसे कहा – 'हे कमलासन ! म अब बहुत प्रसन्न हू आप बतावे कि आपको कौन सी वस्तु म दे सकता हू " एसा पूछने पर ब्रह्माजी कहने लगे – "हे स्वामिन ! मझ आपकी कृपा के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं चाहिये । ससार की कल्याण – कामना के सिवा मुझे और कुछ भी अभिलाषा नहीं है । प्रार्थी लोगो के अभीष्ठ पूण करते हुए अनुग्रहभाव से आपको यहा रहना चाहिय । ' एसा कहन पर रमापति भगवानने तथास्तु ' कहा । ऐसा वरप्रदान करन के बाद भगवानन देवताओ, येगियो, मनियो राजाओ को अपन अपन स्थानो मे बिदाकर भेज दिया था । (वराह पुराण ५२ अध्याय)

२४ फल्गुनीतीर्थमाहात्म्यम् ।

सनकादि योगिब द पापनासिनी तीथ के तट के निकट घोर जगल म आनन्दपूवक निवास करने लगे । उसी के ईशानभाग मे सप्तर्षिगण भी फल्गनीतीथ के तट पर अपन आश्रम म आनन्द से निवास करने लग । प्राचीनकाल म अरुन्धतीदेवी की तपस्या से प्रसन्न होकर श्रीलक्ष्मीदेवीजी फल्गनी पूर्णिमा के दिन फल्गनी के तीर पर प्रकट हुई । उनको इच्छित वर दे कर, उनसे प्राथना किय जान पर उस तीथ का फल्गनीतीथ नाम रखा । फाल्गन मास मे पूवफल्गुनी नक्षत्रयक्त पूर्णिमा को जो मनुष्य इस फल्गुनीतीथ मे स्नान करेग उनपर अत्यन्त प्रसन्न होकर उनकी सकल कामना पूर्ण करते हुए उनके घर म श्रीलक्ष्मीजी सदा रहेगी । कई देवताओ न इकट्ठा होकर विचार कर निश्चय किया कि यही लक्ष्मी पति भगवान रहते ह अतएव हम लोग भी श्रीवेकटेश भगवान की सेवा करते हुए इसी स्थान पर निवास करे । तदनन्तर स्वामितीथ के उत्तर मे अपना अपना आश्रम बनाकर उन लोगो ने वही सुखपूवक निवास करना आरभ किया ।

२५ जाबालीतीर्थमाहात्म्यम् ।

तालाब के पश्चिमोत्तरभाग में जाबालि ऋषि अपना आश्रम बनाकर आराम से निवास करते थे । अगस्त्यजी उस पवत के ऊपर उत्तम उत्तम उद्यान लगाकर भान्ति भान्ति के पुष्पो से श्री वेंकटेश भगवान की पूजा करते तथा अपने शिष्यो के साथ आनन्दामतपान करते हुए वेकटाद्रि पर चिरकाल तक निवास करते रहे । पुरुषोत्तम श्रीवेंकटेश भगवान पथ्वीदेवी तथा लक्ष्मीदेवी के साथ कृत, त्रेता तथा द्वापर इन तीनो युगो मे नित्योत्सवो से पूजित हो प्रार्थी जनो का अभीष्ट पूण करते हुए सानन्द रहे । (वराह पु० ५३ अध्याय)

२६ कलियुग मे श्रीवेंकटेश्वरजी की लीलाएँ।

पहले कृत त्रेता एव द्वापरयगो म श्रीवेंकटशजी की लीलाओ का किया जा चका। अब कलियुग म उनकी लीलाओ का बयान किया जायगा।

कलियग म श्रीवकटश्वरजी को मौन होकर रहना होगा। मासचक्ष मनष्यो को कवल अर्चावतारवत (शिलादि मूर्ति रूप) ही मालूम पडेगे। व स आया हुआ दिव्य विमान तो अन्तर्धान होगया ह। कलियग म पुण्य मनुष्यगण भगवान का पथक विमान बनायग। सब मनुष्य श्र वकटश भगवा अर्चावतार (मूर्तिमात्र) ही कहग। उनका साक्षात भाषण मात्र ता नही रहे सभा अनग्रह तथा निग्रह पहले की तरह अब य करग। भगवान सबको हुए भा नहा देखने के समान रहग। कलियग म वरदान अधिक होगा विमान कत्रिम प्रतीत होता ह कि तु दशन मात्र स ही करोडो पाप अवश्य करेगा। श्रावकटेश भगवान कभी कभी प्रत्यक्ष हो जाया करग। इस लक्ष्मीजा क साथ वे वहा विहार करते रहेग।

थोडा दान थोडी भक्ति तथा थोडी ही पूजा या स्मरणमात्र स ही वे हो जायग। वेंकटाद्रि के पास यात्राथ जान मात्र से शीघ्र प्रसन्न होकर भ मनष्यो के अनक अभीष्ट पूर्ण करेग। स्वय अप्राकृत होन पर भी प्राकृत के चरित्र करेंग और वे प्रसन्न चित्त हो मनुष्यो के भोगन योग्य भोगो का उ किया करग। मनुष्यगण भगवान के नाना प्रकार के उत्सव मनायग।

कलियग म देवता भी स्वामि की सेवा के लिय आ जायग और स्वामित स्नान करग तथा भगवान को नवद्य चढायेंग। वे मनुष्यो को नही दिखाई दे भी निवदन किया हुआ नवेद्य खा जायगे। आदर के साथ पूजा करेंग। सभी यह प्राथना भी करेंग कि हम लोग भी मनुष्य हो जाय तो कितना अच्छा हो यह ईर्ष्या होती ह कि भगवान मनष्यो की इच्छा हो बहुत शीघ्र पूर्ण करते ह

कलियुग मे पथ्वीतल पर श्रीवकटेश्वरजी की कीर्ति विशेष रूप से हो जायगी। श्रीवेंकटाधीशजी की सब जाति के लागो को बहुत ही अधिक होगी। भगवान उनके अभीप्सित शीघ्र ही प्रदान करेंग। श्रीवकटश भग उत्सव म केवल भारतवष के लोग ही नही अन्य द्वीपो म उत्पन्न लोग भी भक्ति रखते हुए करोडो करोडो की सख्या म आयग और सभी अपना इष्ट लाभ कर प्रसन्न हो जायग।

सुवर्णशिखर युक्त वेंकटाचल अप्राकृतिक होता हुआ भी कलियुग म पर प्राकृत पर्वत के समान ही रहेगा। सर्वात्मक परमात्मा श्रीवेंकटश २ पर अन्य जन्मो मे प्रवेश किये हुए लोगो को भी भक्ति होगी। भक्तो को

भगवान पर दूसरों की भी भक्ति उत्पन्न होगी। एहिक धन धान्यादि दृष्ट फल के लिये भगवान का भजन करनेवालों को श्रीवेंकटेश भगवान एहिक फल देते हुए कलियुग में विचित्र रूप से विहार करेंगे। अतएव श्रीवेंकटेशजी की सेवा भूषण के सदृश है। इसलिये कलियुग के दोषों से घिरे हुए पापकर्मी मनुष्यों के लिये पृथ्वी पर श्रीवेंकटेश भगवान को छोड़कर दूसरा आश्रय नहीं है –

वेंकटेशसमो देवो नास्ति नास्ति महीतले।
स्वामिपुष्करिणीतीर्थसमं नास्ति न चास्ति हि ॥'

तथा स्वामिपुष्करिणी के समान कोई तीर्थ नहीं है। भगवान श्रीवेंकटेश कलियुग में नित्य द्रव्य के उपार्जनपरायण ही होंगे। सर्वदा सभी कामनाओं के पूर्ण होने पर भी लोकानुग्रह के लिये 'तुम्हें सम्प्रति इतना द्रव्य मुझको देना चाहिये तब मैं तुम्हारा अभीष्ट अवश्य दूँगा' – ऐसा बोलते और सभी मनुष्यों के साथ क्रीडा करते हुए भगवान वेंकटेश कलियुग में रहेंगे। (वराह पुराण ५८ अध्याय)

२७ सनकसनन्दनतीर्थमाहात्म्यम्।

पापनाशक तीर्थ से आधे कोस उत्तर में परमपावन सनकसनन्दन नामक पुण्यतीर्थ है। अगहन मास (मार्गशीर्ष) के शुक्लपक्ष में द्वादशी को अरुणोदय के समय दृढ मन होकर स्वामिपुष्करिणी तीर्थ में स्नान कर त्रयोदशी से आरंभ कर सनकसनन्दन तीर्थ में स्नान करके वेंकटाद्रिपति भगवान के अष्टाक्षर महामंत्र का प्रतिदिन जप करने से तुरन्त ही सिद्धि होगी।

२८ कायरसायनतीर्थमाहात्म्यम्।

सनकसनन्दन तीर्थ के समीप कायरसायन तीर्थ है। उसका जल पान करने से तत्क्षण देह भी शुद्ध हो जाती है। यह तीर्थ पत्थर की चट्टान से छिपा हुआ है। पुण्यात्मा महात्माओं को ही वह दर्शन देता है। (वराह पु० ६० अध्याय)

पुण्यं पवित्रमायुष्यं माहात्म्यमिदमुत्तमम्।
यः पठेत्प्रयतो भक्त्या शृणुयाद्वा लिखेदपि।
सर्वान्कामानवाप्नोति सम्प्राप्नोति च मंगलम् ॥

परमपवित्र, पुण्यकारक तथा आयु – वर्द्धक इस परमोत्तम माहात्म्य को जो भक्ति भाव से पढता, सुनता अथवा लिखता है, वह सब कामनाएं तथा परममंगल प्राप्त करता है। (वराहपुराण ६१ अध्याय)

प्रथमाश्वास समाप्त।

श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नम ।

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् ।

द्वितीयाश्वास ।

१. वेङ्कटाद्रिमाहात्म्यम् ।

देवता ऋषि तथा योगी वेकटाद्रि को परमात्मालय कहते ह । इसे कृतयुग म अजनाद्रि त्रता मे नारायणाद्रि द्वापर में सिहाद्रि एव कलियग म वेकटाद्रि कहा करते ह । यह वकटाद्रि सात योजन विस्तीण और एक याजन ऊचा हे । जो भक्ति भाव से हजारो योजन दूर किसी दसरे द्वीप म रहकर भी उस दिशा को लक्ष्यकर इस पवत को प्रणाम करता हे वह सब पापो से मक्त होकर विष्णलोक म चला जाता हे ।

२ कुमारधारातीर्थमाहात्म्यम् ।

इस पवत पर कुमारधारिका नामक लोकपावन तथा परम पवित्र सरोवर ह । जो कोई कुभ मास के रविवार के दिन माघकी पौणमासी की महा पुण्यतिथि म मखानक्षत्र युक्त होने पर मध्याह्न काल म स्नान करता हे वह गगादि सव तीर्थो म नियमबद्ध होकर बारह वष तक स्नान करन का सत्फल पाता है । उस तीथ म यथाशक्ति दक्षिणा के साथ अन्नदान जो कोई करता हे उसे भी उपयुक्त फल मिलता हे ।

३. तुम्बुरुतीर्थमाहात्म्यम् ।

जो मनष्य मीनस्थ सूय की पौणमासी तिथि म उत्तरफलगनी नक्षत्र होने पर चतुथ काल म इस तुम्बरु तीथ म स्नान करेगा वह पुन गभ से उत्पन्न नही होगा ।

४ आकाशगगामाहात्म्यम् ।

मषराशिस्थ सूय का चित्ता नक्षत्र से योग होने पर पुण्य पूर्णिमा तिथि के प्रात काल मे इस आकाशगगा नामक सरिता म स्नान करने से मनुष्य मोक्ष पाता हे ।

५ पाण्डवतीर्थमाहात्म्यम् ।

वशाख मास द्वादशी तिथि रविवार भौमसमन्वित शक्ल या कृष्ण पक्ष म इस पाण्डवतीथ म जो मनुष्य स्नान करेगा वह इस लोक म कभी दुःख न पावेगा तथा परलोक म भी परम सुख लाभ करेगा ।

६ पापनाशनतीर्थमाहात्म्यम् ।

पापनाशन तीथ म जो मनुष्य पुष्य अथवा हस्त नक्षत्र युक्त पौष मास के शक्ल अथवा कृष्ण पक्ष के सप्तमी रविवार को नियम बद्ध होकर स्नान करता हे वह पुरुषश्रेष्ठ करोडो ज म में किये हुए पापो से मुक्त हो जाता हे ।

७ देवीतीर्थमाहात्म्यम् ।

श्रीनिवास के देवालय के वायव्य कोण मे गिरिशिखर के गह्वर मे अतिरहस्यमय देवीतीथ हे । गुरुवार के दिन पुष्य के यतीत हो जाने पर अथवा सोमवार को श्रवण नक्षत्र पडन पर जो कोई उक्त तीथ म स्नान करता हे उसका ज्ञान अथवा अज्ञान स किया हुआ पाप कट जाता हे पुण्य की अत्यन्त वृद्धि भी होती हे तथा पुत्र पौत्र सबा स परिपूण होकर दीघ आयु पाता है ओर अन्त म स्वग लोक पाता हे । उस दिन अन्नदान करनवाला जीवन भर अन्न का अखण्ड रूप स दान करने का फल पाता । (वराह पुराण १ अध्याय)

*[1] ८ आकाशराजा का जन्मवृत्तान्त ।

राजा विक्रमाक का स्वगवास हो जाने पर बहुत काल पयन्त सोमवशोदभत मित्रवर्मा नामक महा भाग्यवान महारथी राजा तुण्डीर मण्डल के नारायण पुर में राज करता था । उस धर्मात्मा राजा के धम स भूलोक का शासन करते समय पथ्वी मण्डल सव सस्य सम्पन्न हुई थी । उसकी सभी प्रजा धार्मिक एव ईति या याधिरहित रहती थी । पाण्डच कन्या मनोरमा देवी उसकी पत्नी थी । उसस आकाश नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई । इस आकाश कुमार की स्त्री शकवशजा धरणी देवी थी । नपोत्तम राजा मित्रवर्मा इसी आकाशकुमार पर राज्य भार देकर परम पुण्य वेंकटाद्रि के तपोवन में बुढापा आने पर तप के निमित्त चले गय ।

[1] यहा से इस पुराण म सक्षिप्त रूप म कथित यह विषय भविष्योत्तर पुराण म विस्तार से कहा गया ह ।

९ पद्मावती की उत्पत्ति का वृत्तान्त।

आकाशराजा यज्ञार्थ आरणी नदी के किनारे की भूमि को सोन के हल जोनकर बीज बो रहे थ कि राजा को भूमि से आविर्भूत सवलक्षण सम्प तपाये हुए सोने की बनी हुई पुतली के समान शोभित तथा कमलरूप शय्या प सोई हुई एक परम मनोहर कन्या दीख पडी। उस लडकी को आश्चर्यान्वित ह देख तथा लाकर ' यह लडकी मेरी ही हे " – ऐसा बार बार कहते हुए मन्त्रि के साथ राजा आनन्दित हुए। तब आकाशवाणी न कहा कि " हे राजन सत्य ही यह आपकी पुत्री है अतएव आप इस सुलोचना का पालन कीजिये ' तदनन्तर प्रसन्न मन होकर राजा न अपन महल म प्रवेश किया और अपनी स्त्री धरणीदेवी को बलाकर कहा कि द न स दी हुई प वी तल स उत्पन्न मेरी इ कन्या को देखो। हम दोनो अपुत्रा की यही पुत्री होगी, ' एसा कहकर आका राजा ने परम प्रीति स उस धरणीदेवी के हाथो म द दिया। पद्म स उत्पन्न हो क कारण पद्मिनी नाम रखा गया।

१० वसुदान का जन्मवृत्तान्त।

आकाशराजा की पत्नी धरणीदेवी न पद्मावती को लेकर अन्त पुर प्रवेश किया। पश्चात उसने गभ धारण किया। दसवे मास म धरणीदेवी अत्यन्त शभ महूत म पाचो शभ ग्रहो के उच्च स्थान म बठन पर मेष व सक्रान्ति म पुत्र रत्न प्रसव किया। तब समीर मन्द मन्द चला। पवित्र ग्यारह दिन जातकर्मादि क्रिया कर राजा ने उस बालक का वसुदान नामकरण कि वह मनोहर बालक वसुदान दिनो दिन शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान बढ लगा। परम विनीत वह ब्रह्मवेत्ता गुरुओ से उपनीत हुआ। पिता से उस अस्त्रा तथा शस्त्रो को मन्त्रपूवक सीख लिया। उस परम बलवान पुत्र के कार वह राजा शत्रुओ स दुराधष तथा दुर्निरीक्ष्य हो गये। (वराह पुराण ३ अध्याय

११ नारदमुनि का पद्मावती से सामुद्रिक लक्षण – कहना।

रूपयौवन सम्पन्ना सखिगणो से घिरी हुई बगीचे म विहार करती हु पद्मिनी के पास एकदिन अकस्मात महर्षिसत्तम नारदजी आ गय और वनलक्ष्मी समान सुन्दर उसको देखकर आश्चय से यह बोले – ' तुम कौन हो ? किसका पु त्री ? हे भीरु ! अपना हाथ मुझको दिखाओ । तब पद्मावती न अपन विषय मुनि से कहा कि – म आकाशराजा की कन्या हू । मेरा हाथ देखकर मे लक्षणो को कहिए" । नारदजी न उसका हाथ देखकर कहा कि " तुम क्षीरसा

ात्र साक्षात लक्ष्मी के समान दीखती हो । तुम तो विष्णु के योग्य पत्नी जान ी हो । लोकत्रयश्वर लक्ष्मीपति तुम्हारे पति होगे" । ऐसा कहकर तथा उससे त हो नारदजी अ तर्धान ह। गये ।

१२ पद्मावती का सखियो के साथ फुलवारी मे जाना ।

सखिया पद्मिनी से बोली कि हम सब फुलवारी मे नाय जो वसन्त के आने त्यन्त रमणीय दीख पडती है । वे सब पद्मावती के साथ उद्यान मे जा फूल रही थी कि सबोन दो श्वेत और उज्ज्वल दातवाले, गण्डस्थल से उत्पन्न ारायक्त, हथिन यथ समेत सूण्ड द्वारा कुल्ला पुचकारते हुए किसी गजेन्द्र को आर देखकर उद्विग्न हृदय हो वे सभी नरपति के निकट चली गईं ।

१३ मृगयार्थ पुष्पाटिका मे श्रीनिवास का आगमन ।

इसी समय कानो तक फले हुए कमलनयन वाले सुन्दर पतला पीताम्बर , पद्मराग मणि के चमकील सुन्दर कुण्डलवाले, रत्न जटित सुवर्ण की पली ी कमर म लपट सोने के यज्ञोपवीत से मनोहर एक घ वेशवाले कामदेव के न सुन्दर श्यामवणवाले एक पुरुष को शरत – कालीन निष्कलक चन्द्रमा के र उज्ज्वल ऊचेघोड पर आरूढ होकर एक मग (भडिया) का तेजी से पीछा जाते हुए उन्हान देखा । घोड पर चढ हुए उस पुरुष का देखकर गजन्द्र ने । नवाया ओर सूण्ड उठाकर चिघाडता हुआ लोट कर वनमें चला गया । फिर इसवार उन फूल तोडनवालियो के निकट पहुचकर बाले कि 'हे कन्याओ ! क्या कोई मग आया है ? आप लोगो न उसे देखा हो तो मझसे कहिय ।' उन कन्याओ न जवाब दिया कि 'हम लोगो न कई मग कभी नही देखा । । धनषधारी हो आप हम लोगो के वन म किसलिय आये ह । यहा पर वाले सभी मग अवध्य ह । आकाशराजा के अधीन म सुरक्षित इस वन मे चले जाइय" । उनके एस वचन सुनकर वे घोडे से उतर गय ओर बाले – प सब कौन ह ? ओर यह सवाग सुन्दर कन्या कौन है । यह मुझे सुनाइय । सुनकर म अपन निवास स्थान पवत पर चला जाऊगा ।' उनके ऐसे वचन र पद्मावती की प्ररणा से उसकी सखी न कहा – "पथ्वी से उत्पन्न आकाश की पुत्री तथा पद्मावती नाम से प्रसिद्ध यह हम लोगो की नायिका हे । हमें यह सुनाइए कि आप किस नामवाले तथा किसके पुत्र ह ? आपकी जाति है ? कहा आपका घर हे ? आप यहा किसलिये आय ह ? एसा पछन पर ास यक्त मख वाले वे उनसे बोले – "हम लोगो का सूयवश बताया जाता मेरे नाम अनत और पवित्र ह रग तथा नाम दोनो से मझ कष्ण कहते ह ।

मरा चक्र वेद – ब्राह्मणो के द्वषियाँ तथा देवताआ के शत्रुओ के लिये महाभय है । मेरे शख की ध्वनि सुनकर वरीगण मोहित हो जाते ह । मेरे धनष के सम देवताआ का भी धनष नही है । मझ वेंकटाचल निवासी को वीरो के स्व कहत ह । म उस पवत स अपन निषाद अनचरो के साथ शिकार के लिय लोगा के वन म आया हू । मझस ही पीछा किया हुआ कोई मग वायवेग गायब हो गया । उसको खोज करते करते यहा आकर इस सु दरी को देख इसपर मेरा प्रम हो गया । क्या यह राजपुत्री मझ प्राप्त हो सकेगी ? वचनो को सुनकर सभी क्रोधित हो उसस पुन बोली – आकाशराजा तुम देखकर कठिन बन्धन म बा धकर जबतक नही ले जाता ह उसके पहले ही अपने घर शीघ्र चले जाआ । उनस इस तरह डराया जाकर वे अपन घ ड चढकर सभी अनुचरो सहित शीघ्र ही पवत पर चले गय ।

(वराह पुराण ४ अध्या

१४ पद्मावती से श्रीनिवास के परिणय के कारण।

अपन दिव्यालय पर पहुच, अनगामियो को विश्राम करन के लिय करके मक्तागह में प्रविष्ट होकर नवरत्नमय पलग पर लेटकर पद्मावती ध्यान करते करते श्रीनिवास अत्यन्त मोहित हो गय । इतन मे सखी श्री व मालिका अनेक प्रकार के अन्न उत्तम व्यजन और अपूप आदि तयार कर सखि समेत श्रीनिवास के पास पहुची । उसने उन्ह भक्ति भाव से प्रणाम किय पीछे श्रीनिवास को रत्नभूषित शय्या पर आख बन्द किय हुए कुछ सोचते देखा । उसन उनस प्राथना की कि ' हे देवदेवेश ! हे पुरुषोत्तम ! ! उ परमान्नादि तयार ह । उन्ह खाकर मुझपर अनग्रह कीजिए । क्यो आत समान सोय हुए ह ? आप सबका दु ख दर करनवाले तो ठहरे । शिकार के घूमते समय वन म आपने क्या देखा ? आपकी अवस्था कामात के समान बी है । देवकन्या, मनष्यकन्या या नागकन्या कौन देखी गई है ? आप क्या अ सखी मझस उस चित्तहारिणी कन्या के बारे म नहीं कह सकते ? ' उसके व को सुनकर श्रीनिवास जोर स निश्वास लेन लगे और चप रहे । पुन व मालिका न कहा – आपके भी मन को हरण करनवाली वह कन्या कौन है तब श्रीनिवास बोले – ' म कहता हू, श्रद्धा स सुना ।

प्राचीन काल त्रतायग मे म ने जब रावण को मारा था उस र वेदवता कन्या न लक्ष्मी का सहायता की थी । वह लक्ष्मी जनक महाराज भूमि स सीता रूप म उत्पन्न हुई । पचवटी वन म मारीच को मारन के मेरे चले जान पर सीता स प्ररित हो मेरे भाई लक्ष्मण भी मेरे ही पीछे

ये । इसी बीच हम दोनो की अनपस्थिति म सीता को हरन के लिय कपट
रक्षक के रूप मे राक्षसन्द्र रावण आ पहुचा । अग्निहोत्र न रावण के उस प्रकार
उद्यम को समझ सीता को पाताल म लाकर स्वाहा म निवेश करवा कर
सो राक्षस (रावण) स पहले ही छूयी गई अग्नि मे प्रविष्ट सुन्दरी वेदवता को
ता के समान रूप बना रावण का महार करन के लिय वही छोड दिया । वही
वण स हरी जाकर लका म रखी गई और रावण क मारे जान पर पी: उसी
अग्निप्रवेश किया । अग्निद्वारा स्वाहा (ज्वाला) म रक्षिता लक्ष्मी अथवा
री जानकी को मेरे हाथो म सोपकर मुझ स अग्निदव न कहा कि — हे
व ! यह सीता का प्रिय करनवाली वदवती है । सीता क लिय राक्षस
री म उस राक्षस रावण स बदी बनाई जाकर वहा रखी गई थी ।
लिय लक्ष्मी के साथ आप इसका वरदान स प्रसन्न कर । ' इस वचन का
नकर सुन्दरी सीता न मुझ स कहा कि हे विभो ! नित्य मन प्रसन्नता न ावाली
न्वती यही हे । इसलिय इस भाग्यवती को भी वर लेव ।

तब म न यो कहा — हे देवी ! एसा ही होगा अट्ठाईसव कलियुग म ।
तक यह देवताओ स पूजित होकर ब्रह्मलोक म निवास करें । पीछ यह भू
त्री होकर आकाशराजा की राज पुत्री होगी । लक्ष्मी तथा म दोनो ने इस
न्दरी को पहले ही वरदान दिया था । आज वही वेदवती नारायणपुर म पथ्वी
ल स उत्पन्न हुई हे । अपन समान रूपवाली सखियो क साथ वन म फलो को
नते समय उस शिकार क लिय घूमते समय म न देखा । उसक रूप सौन्दय का
गन मझस नहीं हो सकता । उस प्राप्त किये बिना प्राण स्थिर नही हो पाते ।
म नारायणपुर जाकर उस कन्या को देखो तो उसक रूप सौन्दय से जानोगी कि
ह मेरे योग्य हे या नही । "

श्रीनिवास क वचन सुनकर पुन श्री वकुलमालिका बोली कि 'म अभी
पकी आज्ञा से उसक पास जाती हू । ' वह नारायणपुर की ओर जाते जाते
स्ते में अगस्त्याश्रम म पद्मावती की सखियो से मिला ।

(वराह पुराण ५ अध्याय)

१५ वकुलमालिका से पद्मावती सखियो के द्वारा पद्मावती वृत्तान्त कथन ।

वकुलमालिका न उनस पूछा कि 'आप कौन ह ? कहाँ से आयी ह ?
स काय पर यहा आयी ह ? उन्होन इस प्रकार उत्तर दिया — हम सब
क्रवर्ती आकाशराजा की अन्तःपुरवासिनी तथा उनकी पुत्री पद्मावती की

सखियाँ हैं। हम अपनी राजपुत्री के साथ फुलवारी में जाकर पुष्पचयन कर रही थीं कि हमने इन्द्रनीलमणि के समान श्यामल, मन्द मन्द मुसकान-युक्त मुखवाले, सुन्दर लम्बी तथा मोटी दो भुजावाले, शुद्ध पीताम्बरधारी, सोने के मुकुट धारण किये हुए विजयाठ आदि से विभूषित एक दिव्य पुरुष को देखा। पद्मावती ने उस पुरुष को देख विस्मित होकर अपनी सखियों से "देखो, देखो" ऐसा कहा। हम लोगों के विस्मय-भाव से देखते ही देखते वह शीघ्र अन्तर्धान होगये और हमारी सखी पद्मावती मूर्छित होगयी और पीछे हम लोगों ने उसे प्रसाद में लाकर आश्वासित किया।

उसके स्वस्थ होने के पश्चात आकाशराजा ने ज्योतिषी से पूछा कि मेरी पुत्री के ग्रहचारादि फल बताइये। वह ज्योतिषी इस प्रकार बोला कि "हे नृपोत्तम! तुम्हारी पुत्री के सभी ग्रह अब अनुकूल ही हैं। किन्तु नित्य के ग्रहफल कुछ कुछ प्रतिकूल है। फिर भी शीघ्र ही स्वास्थ्यलाभ होगा। कोई उत्तम पुरुष तुम्हारी पुत्री के पास आया था। उसी को देखकर यह राजपुत्री मूर्च्छित होगई लेकिन अन्त में उसी का सहयोग प्राप्त करेगी। उसी पुरुष से भेजी हुई कोई कन्या आवेगी और वह जो कुछ बात कहेगी वह सब तुम्हें हितकारक होंगी। उसके कहे अनुसार करो। मैं तुम्हारी पुत्री के लिये एक सुखोत्पादक बात कहता हूँ। उसका आचरण करो। अगस्त्य-लिंग का ब्राह्मणों द्वारा अभिषेकादि कराओ।" यह कहकर वह दैवज्ञ अपना घर चला गया। तब आकाशराजा ने ब्राह्मणों को बुलाकर कहा कि "हे ब्राह्मणों! आप लोग देवमन्दिर में जाकर शंकर का महाभिषेक मंत्रपूर्वक करें। अभिषेक के सभी-संभारों का सम्पादन कर ले जाइये।" राजा की आज्ञा से हम सभी यहाँ देवालय में आयी हैं। इस प्रकार अपना सारा वृत्तान्त कहकर पद्मावती की सखियों ने वकुलमालिका से पूछा कि "हे सुन्दरी! तुम कौन हो? तुम कहाँ से आयी हो? और क्यों आयी हो?" वकुलमालिका ने प्रसन्न होकर इस प्रकार मधुर वचन कहा कि "मैं वेंकटाद्रि से आयी। मेरा नाम वकुलमालिका है। धरणीदेवी को देखने की इच्छा से आयी। क्या मैं उन्हें राज भवन में देख सकूँ?" यह सुनकर वे कन्यायें बोलीं कि "हमारे साथ आकर तुम राज भवन में धरणीदेवी को देख सकोगी"। उनके ऐसा कहने पर वह उनके साथ राज मन्दिर में आयी।

१६. धरणीदेवी के प्रश्नों का पुलिन्दिनी के द्वारा उत्तर।

उस समय धरणीदेवी एक पुलिन्दिनी से बातें कर रही थी जो भूत तथा भविष्य की सब बातें सत्य सत्य कहने में समर्थ थी। धरणीदेवी ने पुलिन्दिनी से पूछा कि "मेरी पुत्री पद्मावती का भविष्य फल बताओ। पुलिन्द स्त्री ने कहा

कि 'म सच कहती हू । सुनिय आपकी सुन्दरी पुत्री के शरीर को सुखा देन का कारण एक पुरुष दशन द्वारा प्राप्त हुआ हे । उस पुरुष को न देखन स यह पुत्री कामदेव क बाणो स पीडित तथा शरीरताप से जल रही है । वह पुरुष तो देवाधिदेव ह और स्वय वकुण्ठ से आय हुए ह । श्रीवकटपवत क शिखर पर स्वामिपुष्करिणी क तीर पर कामरूपी हो श्रीलक्ष्मी के साथ वनो म रमापति विहार कर रहे ह । उन्होन ही घोड पर सवार हो दूसरे दूसरे जगलो म विचरते हुए, आपके उपवन मे आकर आपकी पुत्री को देखा । सुन्दरता में लक्ष्मी के समान इसे देखकर वह स्वय कामवश होगय ।

वह अपनी सखी को आपके पास भजेंग । यह पुत्री उनको पाकर रमादेवी ही की तरह अनन्तकाल तक सुख से रहेगी । धरणीदेवी ने उस पुलिन्द स्त्री को पुरस्कार दे बिदा किया और अन्त पुर म अपनी दामतुरा पुत्री पद्मावती जो निज सखियो से परिवत्त थी, के पास गई । उसन पूछा कि बेटी! तुम्हे क्या चाहिय? कौनसा पदाथ तुमको प्रिय है?"

१७ पद्मावती का अपनी इच्छा माता से निवेदन करना ।

पद्मावती न इस प्रकार कहा– 'हे माता! जो ससार में आखो के प्यारे एव सज्जनो को भी प्रिय ह, जिसे देखन की इच्छा ब्रह्मादि देवो को भी है, जो महान एव सवव्यापी ह, जो देवताओ क भी देवता और भक्तो को ही प्राप्य है उन्ही परमपुरुष विष्णु को म प्यार करती हू । उनमें मेरा मन लग गया है । म दूसरे की कामना नही करती । म श्यामल विष्ण का ही स्मरण करती हू । उन्हीं से म जीऊगी अत उनसे मेरे मिलन का उपाय करो । यह सुनकर धरणीदेवी सोचन लगी कि विष्णु भगवान किस प्रकार इसपर प्रसन्न हो सकते ह । इसी समय अगस्त्यलिंग का अभिषक करने के लिये गये हुए ब्राह्मण पद्मावती की सखियो तथा वकुलमालिका को साथ लेकर आय । ब्राह्मणो को सुन्दर सुन्दर भोजनादि से सतुष्ट कर वस्त्रादि अलकारो के साथ पूरी पूरी दक्षिणा दे, वाछित अभिलाषा की सिद्धि होन का आशीष पुत्री को दिलवाकर उन्हे बिदा किया । (वराह पु० ६ अध्याय)

१८ धरणीदेवी से वकुलादवी के द्वारा श्रीनिवास वृत्तान्त कथन ।

विप्रो के चले जान के बाद धरणीदेवी ने उन कन्याओ से पूछा– हे कन्याओ! यह तुम लोगो के साथ आयी हुई कौन हे? कहा से और किसलिय यहा आई हे?" कन्याए बोली–' यह आपके पास ही कार्याथ आयी है । देवालय में श्रीशिवजी के निकट ही इनका साथ हुआ । यह पूछन पर बोली कि आपको ही देखन आयी हू । "क्या मझसे राज गृह म प्रधान महिषी देखी जा सकती है"? ऐसा पूछन पर हम लोगो न कहा कि ' हमारे साथ चलिये । हमलोग धरणीदेवी

की दासिया हू और रा । गृह में ही जायगी । ऐसा कहने पर यह हमारे साथ सा आयी । अब आप ही से य पूछी जाय कि यहा आपका आगमन किसलिय हुआ है । उनकी बात सुनकर वकुलमालिका से धरणीदेवी ने पूछा 'हे देवी ! आ कहा से आयी ह ? आपका मझसे कौन काम है ? मैं आपके आगमन के प्रयोज को अवश्य करूंगी । धरणीदेवी को वकुलमालिका ने प्रत्युत्तर दिया – " मैं वकटा स आयी हूँ नाम वकुलमालिका है । हमारे स्वामी श्री नारायण भगवान वेकटा पर है । किसी समय उज्ज्वल घोडे पर चढकर शिकार खेलने को वेकटाद्रि समीप से जाते हुए एक उपवन में फूलो को तोडने वाली रूपसम्पन्न कन्याओ व उसने देखा जिनके बीच में अत्यन्त मनोहर, लक्ष्मी जी के समान एक सुन्दरी व भी देखा और उसी में असक्त हो गये । उसका ग्रहण करने की इच्छा से उस पुरुष उनसे पूछा कि यह किसकी कन्या है ? उन्होंने कहा कि यह आकाशराजा की कन्या है उनके इस वचन को सुनकर हमारे स्वामी परम वेग से घोडे पर चढ़कर देवालय शीघ्र चले आये । फिर उन्होंने मुझे बुलाकर आज्ञा दी कि हे वकुलमालिके आकाशराजा की नगरी में जा अन्त पुर में प्रवेश कर उस राजा की प्रधान महिष धरणीदेवी का पास कुशलादि पूछकर उनकी – परम सुन्दरी पुत्री पद्मावती व याचना मेरे लिये करो । मैं ऐसी आज्ञा पाकर आपके गृह में आयी हूँ । अ राजा तथा अपनी कन्या से राय लेकर यथोचित करो और मुझको उत्तर दो । "

१९ श्रीनिवास के साथ पद्मावती के परिणय का निश्चय होना ।

धरणीदेवी ने आकाशराजा तथा पद्मावती को बुलाकर उन्हे वकुलमालिक की बाते सुनायी । आकाशराजा ने प्रसन्न होकर कहा – 'यह कन्या अयोनिज एव दिव्या है । वर वेकटाद्रि निवासी देवादिदेव है । आज ही मेरा मनोरथ पूर हुआ है । राजा ने स्वर्गलोक से बृहस्पति जी को बुलवाया और उनके आने प उनसे कहा कि श्रीनिवास को देकर पद्मावती का विवाह करने का निश्चय किया कन्या का जन्म नक्षत्र मृगशिरा है और श्रीनिवास का तो श्रवण है । अब आप इ दोनों के योग विचार कर शुभमुहूर्त निश्चित कीजिये । यह सुनकर बृहस्पतिज बोले – 'उनको उत्तर फल्गुनी नक्षत्र सभी तरह से शुभप्रद है । अत वैशाख महीने के उत्तरफल्गुनी नक्षत्र में उनका विवाह विधिपूर्वक कर देवे । " त आकाशराजा ने वकुलादेवी से कहा कि हे शुभे ! भगवान के आलय को तु चली जाओ । वैशाख मास में उत्तर फल्गुनी नक्षत्र होने पर विवाह होगा वैवाहिक प्रयत्न सब कर आपलोग आ जाये । " पीछे पद्मावती के परम प्रि महर्षि शुक को वकुलादेवी के साथ भेजकर इन्द्रादि देवताओ को बुलाने के लि वायु को और नगरालंकार करने के लिये विश्वकर्मा को नियुक्त किया ।

तब वकुलमालिका शकमहर्षि के साथ श्रीवेंकटाद्रि पहुच कर श्रीनिवास के आलय के अ न्र गई। लक्ष्मीजी के साथ रत्न पीठ पर बठ हुए श्रीनिवास को देख वह प्रणाम कर बोली – 'हे विभो! वहा का काम कर लिया। मागलिक वार्ता कहन के लिय श्रीशकजी आय ह। तब शुकजा ने प्रणाम कर उनसे कहा कि पथ्वीसुता पद्मावती आपके प्रति बोली हे कि म आप ही का नाम सदा जपती हू ओर आपकी ही सौम्यमूर्ति का सदा ध्यान व स्मरण करती हू। आपके चिह्नो को ही भुजादि शरीर पर धारण करती हू। आपके भक्तो को म सदा पूजती हू। यह सब म अपन पिताजी की अनमति से किया करती हू। मेरे ऊपर अनुग्रह कर मझ स्वीकार करे।' इस प्रकार प्रिय वचन शक से सुनकर भगवान बोले – 'हे शके! तुम जाओ और उससे कहो कि भगवान ने एसा कहा है कि मागलिक विवाह तुमसे करने को म प्रसन्नभाव से देवताओ के साथ आऊँगा"। यह कहकर अपनी वनमालिका पद्मावती के लिये शकजी के हाथ मे देकर उन्हे भजा। शकजी ने भगवान की दी हुई वह मालिका पद्मावती को दे प्रणाम कर भगवान के शुभवचन कहे। उस मालिका को लेकर पद्मावती न अपने सिर पर धर लिया और भगवान के आगमन की प्रतीक्षा करती रही। आकाशराजा न भी आनदित होकर चन्द्रमा को सादर बुलाकर कहा कि "विवाह में विष्णु भगवान के नवेद्य के योग्य विविध रसयुक्त परमान्न बनाइय"। इस प्रकार सभी सामग्रियो का आयोजन कर भगवान के आगमन की प्रतीक्षा में पुत्री को अलकारो से सुशोभित कर धरणीदेवी के साथ आकाशराजा सभा में बठ। (वराह पु० ७ अध्याय)

२० श्रीनिवास का अलकृत होकर विवाह के निमित्त वियद्राजपुर को जाना।

देवादिदेव भगवान श्रीनिवास ने लक्ष्मीजी को बलाकर कहा कि 'विवाह के लिय क्या करना चाहिये, कहो। अपनी सखियो को आज्ञा देकर सब कुछ कराओ"। लक्ष्मीजी की आज्ञा पाकर उसकी सखिया श्रीनिवास को अलकृत करने लगीं। सुवण – कलशो में भरकर हाथियो से लाये गये आकाश गगादि तीर्थों के जल से लक्ष्मी ने भगवान को स्नान कराया। केशो को सुगधित धूपा से सुखाया। भगवान के अगो में सोने के रगवाले गध द्रव्यो का लेपन लगाया। पीली कमरधरी यक्त पीताम्बर कमर में पहनाया। इन्द्राणी ने छत्र दिया। मकुट आदि विभषणो से भूषित किया। सरस्वती और गौरी न चामर दिया और विजया तथा जयाने पखे दिये। पीछे लक्ष्मीजी के साथ गरुड पर सवार होकर ब्रह्मा, शकर, वरुण यम, इन्द्र कुबेर, आदि से सेवित हो, वसिष्ठादि मुनियो, सनकादियोगीन्द्रो से अनगामी होकर श्रीस्वामि ने आकाशराजा के नगर नारायणपुर का प्रस्थान किया। उस समय भगवान के सामने गधवपति गाने लगे, अप्सराए नाचने लगी तथा

दवदु दुभिया बजन लगी । इस प्रकार देवतागणो, विष्वक्सेनादि पाषदो तथा पर बठी हुई बकुलमालिकादि सखियो से समन्वित होकर श्री भगवान आकाशरा को सुन्दर अलकृत नगरी म पहुचे ।

४१ पद्मावती - परिणय

श्रीनिवास क शुभागमन का समाचार सुनकर आकाशराजा एरावत हा पर पद्मावती को बिठा पुरी की प्रदक्षिणा कराकर गोपुर द्वार पर क या के स आय और ब धवा धओ के साथ भगवान की प्रतीक्षा करते हुए ठहर गय श्रीनिवास के आन पर आकाशराजा ने वर वधू को निकट खडा किया । भगवान न अपन गले में पडी तथा उत्तम फूलो की माला का अपन हाथो निकालकर श्री पद्मावतीदेवी के गले म डाल दिया । पद्मावती न भी अप मल्लिका माला को उनके गले म समर्पित किया । इस प्रकार उन दोनो न त बार माला – विनिमय करके वाहनो से उतर कर थाडी देर तक पीढे पर बठव पीछ विवाह मण्डप में प्रवेश किया । वहा ब्रह्माजी ने जव के अकुरापण से मागलि सूत्र व धनादि यक्त लाजहोम पयन्त दोनो की ववाहिक अ या य क्रियाय यथोक्तरी से परिसमाप्त करायी । चौथ दिन विवाह – काय सम्पूण करक आकाशराजा अनज्ञा लेकर श्रीब्रह्माजी न देवियो क साथ भगवान को गरुडपर चढाकर वि दुदुभियो के घोषो समेत वषभाचल पहुचान क बाद आप दवताओ के साथ प्रस्था किया । तब आकाशराजा न पद्मावतीदेवी को अनको सुवण – पात्र हजा दूध क घड दिय फल, शक्कर से भरे घड सुवण – मणि यत रेशम के वस हजारो दास दासिया सकडो गौए कई वण के हजारो घोड सकडो हाथी नर गीत जानन वाली स्त्रियो के चार हजार के समूह को प्रसन्नता के लिय दहे म दिया ।

इन सब चीजा का दखकर श्रीनिवास अत्यन्त प्रसन्न हुए और अपने श्वसु श्री आकाशराजा से बोले – ' हे राजन ! आप जा कुछ चाहे वह वर माग ले तब आकाशराजा न कहा कि आपकी इस प्रकार धम से सेवा हो और मेरा म आपके चरण – कमलो म सवदा लगा रह तथा आपम हमारी भक्ति होवे श्रीनिवास न आकाशराजा को ऐसा ही होन का वरदान देकर यथोचित सम्मानि कर तथा ब्रह्मादि सभी देवताओ का सम्मान कर प्रसन्न भाव से सबको अपन अप स्थानो म जान के लिय बिदा किया । उन सब के चले जान के बाद श्री लक्ष्मीज तथा भूमि – कन्या पद्मावतीजी के साथ स्वामिपुष्करिणी के तट पर विहार कर हुए भगवान अपन विद्यालय में पूजित होते हुए विराजमान ह ।

(वराह पु० ४ अध्याय

२२ कलियुग म श्रीनिवास के दर्शन करने वालों का वृत्तान्त ।

इस पुण्य पवत पर वसु नाम का निषाद श्यामाक वन का सरक्षण करता हुआ श्रीनिवास की भक्ति करता था । वह श्यामा के चावलों को पकाकर मधु से भिगोकर श्री लक्ष्मी तथा भूमि देवियों के सहित देवाधिदेव भगवान को समपण करता था । इस प्रकार भक्ति करते समय उसकी सुन्दरी स्त्री चित्रवती न वीर नामक उत्तम पुत्र को प्रसव किया । एक दिन पुत्र को 'श्यामाधान की रक्षा करो" कहकर नियक्त करके अपनी पत्नी के साथ मध का सचय कर लान की इच्छा से वह जगल में गया । वीर बालक पके श्यामा को लाकर अग्नि में रखकर, पकाकर वक्षमल में श्रीपति भगवान को समर्पित कर उस नवेद्य का खाकर सुख से बठा । उसी बीच वसु भी मध लेकर आया और श्यामा धान को खाया हुआ देखकर अपन पुत्र को डराकर खडग लाकर शीघ्र उसको मार देन के लिये हाथ उठाया । तब उसी वक्षस्थ विष्ण भगवान ने हाथ से उसके खडग को पकड लिया । किसी न खडग को पकड लिया – यह देखते – देखते उसन वक्ष को देखा । बाद शखचक्र गदायक्त एव अपन शरीर का वक्ष में छिपाय हुए भगवान को देखा और उस खडग को छोड भगवान को प्रणाम कर बोला – "हे देवदेवेश ! आप यह कसी चेष्टा कर रहे ह ' तब श्री भगवान बोले – "सुनो, तुम्हारा पुत्र मझ म भक्ति रखता है । वह मझ तुमसे भी अधिक प्रिय है । उसके लिय म सवत्र और तुम्हारे लिय तो स्वामिपुष्करिणी तट पर ही रहता हू । इस प्रकार कहकर भगवान तिरोहित हुए ।

पाण्डचदेश से रगदास नामक एक आदमी नारायण पुर में आया जो बाल्य काल से ही विष्ण भक्ति से युक्त था । वहा श्री वेकटाद्रि पर स्वयभत श्रीनिवास के रहन का समाचार पाकर वह उनकी सेवा करने के लिय उधर से चल पडा । स्वणमखी को पारकर, पद्मसरोवर में स्नान कर तथा उसके तीरपर निवास करने वाले बलराम के साथ श्रीकृष्ण भगवान को प्रणाम कर फिर धीरे धीरे शेषाद्रि पर पहुचा । वहा पापविनाशक चक्रतीथ म स्नानकर वेकटाद्रि पर चढा । फिर स्वामि पुष्करिणी म भक्तिपूवक स्नानकर उसके तट पर तरु – मूल में पूजित देवाधिदेव को प्रणाम किया । तब श्री तथा भूदेवियो के साथ श्रीनिवास शखचक्र गदाखडग से सेवित होते हुए गरुडजी के पखो की छाया में प्रत्यक्ष हुए । श्रीनिवास भगवान को इस प्रकार देखकर श्रीरगदास ने आश्चर्यान्वित होकर उन्हे साष्टाग प्रणाम किया । उसन भगवान के लिय बगीचा बनान का निश्चय किया । पुष्पसमपण ककय करन के उद्दश्य से आस – पास के घोर जगल को काटकर पत्थर की दीवार बना दी और फूलो का बगीचा बनवाया । उसम एक कुआ खोदकर उसके जलसे

सब वृक्षों को सींचकर बढाने लगा। बगीचे के फूलों को लाकर उनकी मालायें स्वयं बनाता था और विचित्र तरह से मालाएँ गूँथ कर देवादिदेव को समर्पित करता था। एक दिन उसी बगीचे के तालाब में कोई गंधर्वराज आकर गंधर्वयुवती कन्याओं के साथ स्नान तथा जलक्रीडा करने लगा। पुष्पमालाएँ लाता हुआ रंगदास जलक्रीडा करते हुए गन्धर्वों को देखकर मोहित हो वहीं खडा हो गया। जलक्रीडा के बाद वह गन्धर्वराज स्त्रियों समेत विमान में बैठकर आकाश मार्ग से चला गया। उसके चले जाने के बाद रंगदास होश में आया और उस सरोवर में स्नान करके पुनः फूलों को लेकर धीरे धीरे देवालय में पहुँचा। पूजा काल के बीत जाने पर आये हुए रंगदास को देखकर वैखानसों ने कहा – "देर से क्यों आये ?" ऐसा पूछे जाने पर लज्जा से रंगदास ने कुछ भी नहीं कहा। तब भगवान प्रत्यक्ष होकर इस प्रकार बोले – "हे रंगदास ! क्यों लज्जित होते हो ? मैं ने तुम्हारी परीक्षा लेने के विचार से तुम्हें मोहित किया। तुमने अभी तक काम को नहीं जीता है। पृथ्वीतल पर तुम भी गन्धर्वराजा के समान राजा होओगे। वहाँ मेरी भक्ति करते हुए महान भोगों को भोग कर मेरे लिये प्राकार तथा विमान बनाओगे और वहीं मैं परम प्रसन्न होकर तुमको मुक्ति प्रदान करूँगा। तुम मरण पर्यन्त यहीं मेरी सेवा करो। मेरे सकाम भक्तों की इसी प्रकार मुक्ति होती है।" यह कहकर भगवान अदृश्य हो गये।

यह सुनकर रंगदास ने भी बगीचे को उत्तम बनाया। एक शताब्द देवादिदेव की सेवा करके रंगदास स्वर्ग चला गया।

फिर सोमवंश में राजा सुवीर की पत्नी नन्दिनी के गर्भ से तोण्डमान नामक एक बालक उत्पन्न हुआ। वह पाँच वर्ष की अवस्था से विष्णु भक्त हो गया। वह शूरता वीरता एवं शीलगुण से सम्पन्न हुआ था। पाण्डयराजा की मनोहर कन्या पद्मा देवी से उसका विवाह हुआ था। पीछे वह राजा सैकडों स्वयंवरा कन्याओं के साथ स्वर्ग में इन्द्र के समान सुखों का भोग करने लगा एक दिन राजा तोण्डमान पिता से अनुमति लेकर श्री वेंकटाद्रि कें समीप ही शिकार के उद्देश्य से सपरिवार वन में गया था। वहाँ परिवार से समन्वित होकर पैदल जाते – जाते एक मद की धारा बहाते हुए हाथी को देखा। उसने उसे पकडने के उद्देश्य से उसका पीछा किया। उस हाथी का पीछा करते करते वह सुवर्णमुखी को पारकर, श्रीशुक महर्षि को देख प्रणाम करके, एक वन से दूसरे वन को चला जा रहा था। रास्ते में वाल्मीकाकार में बैठी हुई भगवती रेणुकादेवी को देखा। वह देवताओं से भी पूजित होती थी। उसे प्रणामकर तोण्डमान पश्चिम की ओर जा रहा था। वहाँ वह पंचरंग के सुग्गे को देखकर उसको पकडने की इच्छा से पीछे पीछे दौडा। वह सुग्गा 'श्रीनिवास श्रीनिवास' बोलता हुआ शीघ्र वेंकटाद्रि पर चला गया। वह

राजा भी पीछ पीछे दौडता हुआ वेकटाद्रि पर चढ गया लेकिन तोता नहीं दिखाई पडा। उस पवत पर श्यामा के वन के रक्षक को देखकर राजा तोण्डमान ने उससे पूछा कि कोई पचरग सुग्गा यहा आता हुआ तुमन देखा है ? वन चर न प्रत्युत्तर दिया कि हे राजन्द्र ! वह पचरग का सुग्गा श्रीनिवास का परम प्रिय है। श्री तथा भदेविया उसका पालन करती है। उस सुग्ग को कोई भी नहीं पकड सकता है। सारे दिन वह इसी सु दरगिरिवर पर स्वेच्छा से विहार करता हुआ सध्या समय भगवान के निकट जाकर उनके पास ही म रहता है। म उन्हा श्रीनिवास की पूजा करन जाता हू। आप मेरे आ नान तब इसी वक्ष के तले विश्राम करे और मेरे इस पुत्र के साथ यथा सुख विहार करे। राजा तोण्डमान न कहा कि श्री भगवान के दशन करन के लिये म भी तुम्हारे साथ ही आऊगा। मझ तुम श्रीनिवास भगवान को दिखला दो। उस राजा के वचन सुनकर श्यामा के चावल को मध मे मिलाकर आम के पत्ते पर रख राजा के साथ भगवान के पास गया। वे दोनो स्वामि – पुष्करिणी म स्नान कर उसके पास श्रीवक्ष के मूल में स्थित देवेश के दशनाथ गये। वहा वनचर ने राजा को भगवान के दशन कराये। राजा श्री स्वामि के दशन कर आश्चय पूण नत्रा से आन दलहरी का अनभव करते हुए हाथ जोडकर चुपचाप खडा रहा। निषाद न मध मिले हुए श्यामा के चावल का नवेद्य चढाकर उसका आधा राजा को दे ।का आधा आप खा लिया। पुन राजा निषाद के साथ श्यामाका वन म आया ओर उसकी पण कुटी म एक रात सोकर प्रात काल उठ अपनी सेना सहित नि ज नगर को चला गया। पुन देवी वन में जाकर राजा न चत्र शक्ल नवमी को भगवती की पूजा की। खीर परमान्न, पश ओ के उपहार के साथ सौ घडसुरा द्वारा देवी की आराधना की गई। देवी जी ने परम प्रसन्न हो आवेश रूप म प्रत्यक्ष होकर राजा को वर प्रदान किया कि 'हे राजन ! सुनो तुम्हारा राज्य अकटक रहेगा। तुम्हारे ही नाम से यहा राजधानी होगी। तुम मेरे निकट ही चिर – काल तक राज्य कराग। तुम पर देवादिदेव भगवान की कृपा भी होगी। इस प्रकार वर प्रदान कर देवी जी अतर्धान होगई।

२३ पद्मसरोवर का माहात्म्य

एसा उपयवत रीति से वर पाकर राजा पुन शुकमहर्षि के पास गये। मनि जी उनसे पूजित होकर जब प्रसन्न हुए तब उन्होंने पूछा कि हे मनि जी ! पद्म नामक सरोवर का माहात्म्य मझसे कहिये। शक मनि न इस तरह बयान किया –

प्राचीन काल में दुर्वासा महर्षि के शाप से सुरलोक के अपने दि य धाम से उतरकर विष्ण भगवान के साथ कमलालयी श्री रमादेवी न इस सुवणकमलपण सरोवर पर पहुचकर दस सहस्र दि य वर्षों तक तपस्या की। पीछ इन्द्रादि देवता गण न अ य भगवान सहित श्री लक्ष्मीजी को खोजना आरभ किया। खोजते

खोजते उन्होंने इसी सरोवर के एक स्वर्ण कमल में कमलाक्ष सहित श्रीलक्ष्मी जी को देखा तथा प्रणाम कर अंजलिबद्ध हो लोकमाता की स्तुति की। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर रमादेवी प्रत्यक्ष होकर बोली कि अपने शत्रुओं को मारकर आप लोग अपने लोकों वा स्थानों में जायं। जो मनुष्य संसार में स्थान भ्रष्ट हो गये हैं वे मेरे इसी स्तोत्र से स्तुति कर अपने उस उस स्थान को प्राप्त करेंगे। जो इस स्तोत्र से और अखण्ड बिल्व पत्र से मेरी पूजा करेंगे वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करेंगे। इस पद्म सर में जो कोई मनुष्य अथवा देवता मेरी स्तुति करते हुए स्नान करेंगे वे भी धन, दीर्घायु तथा विद्या से युक्त तेजस्वी पुत्रों को पा, अनेक भोगों को भोग/कर अन्त में मोक्ष को प्राप्त करेंगे। श्रीविष्णु भगवान के साथ–साथ–श्रीलक्ष्मी देवी इस तरह वरदान दे, गरुड पर सवार हो वैकुण्ठ में आ गई।
(वराह पुराण ९ अध्याय.)

श्री शुकमुनि जी राजा तोण्डमान से बोले–"यह पद्म सर सब पापों को नाश करने वाला है और संसार में कीर्तन, स्मरण एवं स्नान करने से मनुष्यों को लक्ष्मीप्रद होता है। तुम भी इसमें स्नान कर अपने पिता के पास जाओ।" राजा तोण्डमान उस पद्मसरोवर में स्नान कर अपने नगर को चला गया। तुरन्त पिता ने उसे युवराज्याभिषिक्त बनाकर, उस पुत्र में प्रजारक्षण करने की सामर्थ्य, प्रजानुरंजकता, पराक्रम एवं सुशीलता देखकर प्रसन्न हुआ। उसने अपने पुत्र को अपने पदपर स्थापित कर अभिषिक्त किया और अपनी पत्नी के साथ वन में चला गया।

राजा तोण्डमान के राज्य पालन करते समय निषाद वसु के वन में देवादिदेव श्रीभगवान वराहरूप धारण कर हर रोज पके हुए श्यामाक खा कर जाते थे। वह निषाद वराह के पैरों के चिह्न रोज देखता था. परंतु उस वराह को न देखकर धनुष धारण कर सारी रात जागता रहा। करोडों चन्द्रमा की प्रभा के समान एक तेजस्वी श्वेत वराह उसको श्यामाक वन में विचरते हुए देख पडा। उसे देख वसु ने सिंहनाद किया। उस शब्द को सुनकर वराह उस वन से निकल कर चला गया। निषाद भी उसके पीछे–पीछे दौडा। रात भर दौडते–दौडते प्रातः काल वह वराह एक वल्मीक (दिआंड) में प्रविष्ट हुआ। निषाद ने क्रोधित होकर उस वल्मीक को खोद डाला। भू वराह प्रत्यक्ष हुए परन्तु वह निषाद तो मूर्च्छित होकर गिर पडा। पिता को मूर्च्छित देखकर उसके भक्तिमान पुत्र ने वराह भगवान की स्तुति की जिससे भगवान प्रसन्न हो गये और उसके पिता में आविष्ट होकर बोले–"मैं वराह देव हूँ। और नित्य इसी में निवास करता हूँ। तुम राजा से कहकर मुझे यहीं स्थापित कराके मेरी पूजा करो। काली गाय के दूध से इस वल्मीक को धो धोकर उससे उठी हुई शिला में मुझ वराह भगवान की मूर्ति को उखाडकर वैखानस ब्राह्मणों से मेरी स्थापना कराकर राजसत्तम तोण्डमान मेरी

पूजा नाना प्रकार की सामग्रियो से करे। यह कह कर भगवान उसको छोड दिया, तब वह स्वस्थ (चतन्य) हो गया। निषाद पुत्र अपने पिताको स्वस्थ बठा देखकर भगवान के सब वचनो को निवेदन किया। अपन पुत्र के सभी शुभवचनो को सुनकर वह निषाद विस्मित हो अपन अनचरो के साथ सब कुछ राजा तोण्डमान से कहने को शीघ्र निकल पडा।

राजा तोण्डमान न वसु को देखते ही परमप्रसन्न हो उसका आदर सत्कार कर पूछा कि तुम्हारे आगमन का प्रयाजन क्या है? निषाद न श्यामाक वन में अपन देख हुए वराह का सारा वत्तान्त बयान कर देवादिदेव का आदेश सुनाया। राजा तोण्डमान यह सुनकर परम आश्चर्यान्वित और प्रसन्न हुआ। फिर मत्रियो के साथ वकटाद्रि पर जाने का निश्चय कर गोपालको को आज्ञा दी कि सब काली तथा कपिला गायें बच्चो के साथ वेकटाचल पर ले जाय। 'कल यात्रा होगी' एसा कहकर वह राजा अ त पुर म गय। यह सारा वत्तात पत्नियो से कह कर वह सो गय। तब उनको स्वप्न म श्रीनिवास भगवान न प्रत्यक्ष होकर एक बिल माग दिखाया और भगवान न नगर से बिल माग तक पल्लव लगा दिये। इस प्रकार का स्वप्न देख राजा न प्रात काल ही म उठकर सभी मत्रियो ब्राह्मणो तथा सारी प्रजा को बुलाकर उस स्वप्न का वत्ता त सुनाया और द्वार पर उक्त पल्लव को देखा। तब राजा तोण्डमान शभ महूत में घोड पर सवार हो चल पडे। पल्लव भी उनके पीछे बिलमाग के पास आय। उसे देखकर परम-आश्चर्यान्वित होते हुए राजा तोण्डमान न वहा पर एक नगर सप्राकार बनवाया। वहा की समस्त पथ्वी को जीत कर पालन करन लग। देवदेव के आदेशानसार उ हे दूध से स्नान कराकर प्राकार का निर्माण काय करन का उद्योग करन लग। तब राजा को स्वय श्रीनिवास न आज्ञा दी कि इमली तथा चम्पक इन दो श्रष्ट वक्षा को छोडकर अन्यान्य वक्षो को काट डालो। इन दोनो का पालन करो क्योकि यह इमली का वक्ष मेरा स्थान है और वह चम्पक वक्ष लक्ष्मी जी का स्थान हे। य दोनो वृक्ष सबसे व दनीय ह। मेरेलिय द्वार तथा गोपुर युक्त केवल प्राकार मात्र ही बनाओ। विमान को तो तुम्हारा वशज मेरा भक्त नारायण नामक राजा बनावेगा तथा उसे सुवण से अलकृत करेगा।" भगवान के इस प्रकार के वचन सुनकर, वह नृपोत्तम प्राकार आदि बनाकर देवदेव श्री भगवान की प्रतिष्टा करके नित्य बिलमाग से जाकर उनकी पूजा करते तथा धम पूवक राज्य पालन करते थ।

उसी समय वीरशर्मा नामक कोई दाक्षिणात्य द्विजोत्तम अपनी पत्नी लक्ष्मी के साथ गगा स्नान करन के लिये निकला। वह ब्राह्मणी रास्ते म ही गर्भिणी हो गई और यात्रा करन में असमथ हो गई। तब वीरशमा राजा तोण्डमान को देखन की इच्छा से राजद्वारपर आया। द्वारस्थ द्वारपाल से जानकर राजा ने उस

द्विजोत्तम को बला, विधिपूर्वक पूजन कर आगमन का कारण पूछा। उस विप्र न उत्तर दिया – हे नृपोत्तम! म वी शर्मा नामक सामवेदी ब्राह्मण हू। सादर गगा स्नान करन के निय स पनी स्त्री के सा थ निकला किन्तु रास्ते ही में मेरी पत्नी यह लक्ष्मी गर्भिणी हो गई। यात्रा के समय इस स्त्री को आप के घर म रखकर म अपना व्रत समाप्त करन के उद्द य से आपके यहा आया। इसको यथष्ट भोजन आदि देकर मेर लौट आन तक इसकी रक्षा करें। राजा ने उसके वचन सुनकर छ मास पय त चावल वगरह और रहन के लिय अ त पुर म ही स्थान दिया। उसको स्थायी रूप से रखकर वह ब्राह्मण प्रसन्न हो गगा स्नानाथ चला गया। उस ब्राह्मणोत्तम न स यात्रा म उत्तम श्रीगगा म मे भागीरथी के पास जाकर वहा स्नान कर वहा से काशी पहुच, वहा तीन दिन निवास कर पीछ गयाजी जा पित श्राद्धादि क्रिया और अयोध्यापुर भी जाकर बद्रिकारण्य म भी गया। पुन वहा से शालग्राम जा कर अपन देश के लिय निकल पडा। वह ब्राह्मणश्रेष्ट दो वष व्यतीत होन पर लौट कर धन धान्यहीन म शुक्ल पक्ष एकादशी के शुभदिन को राजा के पास आया। उसन राजा को दक्षिणा गगा जल समर्पित कर पूछा कि मेरी पत्नी सकुशल तो है। तब राजा वह सब स्मरण कर उस ब्राह्मण से बठन को कहकर अ त पुर मे जाकर राजा न उसे मरा देखा। तब ब्राह्मण मे बिना कह ही बिल म प्रवेश कर श्रीवेंकटेश भगवान का प्रणाम कर राजा श्रीनिवास को देखन गये। राजा न ब्राह्मणी का वृत्तान्त डरते हुए श्रीनिवास को सुनाया। उस राजा से बोले कि हे राजन! डरो मत तुम इस मत ब्राह्मणी को पालकी मे चढाकर अपन अ त पुर की स्त्रियो के साथ मेरे आलय के पूव भाग म अपमृत्य का निवारण करन वाले अस्ति नामक तालाब म द्वादशी के दिन स्नान करा दो। वह पुन जीवित होकर अपने पति से मिल जायगी। तुम शीघ्र जाकर मेरे वचन का यथारीति पालन करो। राजा के एस करने पर वह ब्राह्मणी सजीव उठ बठी और अपन पति मे मिली। राजा ने भगवान की पूजा करके ब्राह्मण को यथेष्ट धन से सन्तुष्ट किया। ब्राह्मण न श्रीवेंकटेश भगवान का प्रभाव सुन चकित हो राजा को आशीर्वाद देकर अपन देश का प्रस्थान किया। ब्राह्मण के चले जान पर राजा से पुन श्रीनिवास बोले कि प्रति दिन म याह्न पूजा म नवद्य क बाद आकर सोन के कमलो मे मेरी पूजा करके अपन नगर मे जा धम से राज्य करो। तुम्हारे जो अभीष्ट होगा वह सभी अवश्य पूर्ण होगे। असमय म मेरे पास कभी मत आओ। एसा ही करन का कहकर राजा भगवान के आज्ञानुसार करते थे।

राजा न एक दिन श्रीनिवास को अचना म समर्पित तुलसी के फूलो को मण्मय देख आश्चर्यान्वित हो भगवान से पूछा कि किसन मृण्मय तुलसी के फूलो से पूजा की? श्रीनिवास न कहा कि मेरा कोइ भक्त कुम्हार कुव गाव म बसता

हे । हे राजन वह अपन घट म ही पूजा करता है और उसको हम स्वीकार करते ह । भगवान का यह वचन सुन राजा उसको देखन के लिय उसके गाव म गये । राजा को देख भीम नामक वह कुम्हार नमस्कार कर सामन खडा हो गया । उस भीम नामक कुम्हारको खडा देखकर राजा न पूछा कि 'हे भीम! तुम देवादिदेव की किस तरह पूजा करत हो ? यह सुनकर कुम्हार न कहा कि म तो पूजा आदि कुछ नही जानता । आपसे किसन कहा कि कुम्हार पूजा करता है ? राजा तोण्डमान न कहा कि श्रीनिवास भगवान न ही हमसे तुम्हारी पजा के विषय म कहा । राजा के वचन को सुनकर पहले का दिया हुआ भगवान का वरदान स्मरण कर भीम न कहा कि 'जब राजा तोण्डमान आ जायग और जब उनसे तुम्हारा सभाषण होगा तभी तुम मक्ति पाओग — एसा प्राचीन समय म श्री वेकटेश्वर भगवान न मझ वर दिया था । एसा कहन पर एक दिव्य विमान प्रत्यक्ष हुआ । तब अपनी पत्नी के साथ उस भक्त श्रेष्ठ कुम्हार न आय हुए विमान तथा जनादन भगवान को देखकर उनको प्रणाम करते हुए प्राणो को त्याग दिय । राजा तोण्डमान के देखते ही देखते विमान पर चढ़कर स्त्री के साथ साथ दिव्य रूप धारण कर वह विष्ण पद वा विष्णलोक को चला गया ।

बुद्धिमान राजा वहा उस अदभुत दृश्य को देख परमानन्दित हो अपन नगर मे जाकर श्रीनिवास नामक अपन पुत्र का राज्याभिषिक्त कर धमपूवक राज्य पालन करो' एसी आज्ञा देकर तपस्या करन गय । उनकी तपस्या स परम प्रसन्न हो श्रीनिवास भगवान रमादेवी तथा भूमि देवी के साथ गरुड पर सवार हो प्रत्यक्ष हुए और बोले — हे नपश्रेष्ठ ! म तुम्हारी तपस्या से स तुष्ट हुआ । अब तुम्हे क्या चाहिय ? भगवान के एसा कहन पर राजा तोण्डमान परम हर्षित हो, अजलि बाधकर गदगदस्वर म य वचन बोले — म बढापा तथा मत्य से रहित हो आपके लोक म निवास करना चाहता हू मेरी यही इच्छा है अत हे प्रभो! आप मझे यही वर दें । राजा तोण्डमान न इतनी प्राथना कर भगवान के निकट पथ्वी पर गिरकर साष्टाग प्रणाम किया । तत्पश्चात शरीर त्याग कर विमान पर चढ गये और गन्धर्वा से स्तुत्यमान होते हुए भगवान का सा रूप पाकर शोक मोह, बुढापा मरण तथा पुन आवागमन से रहित हो विष्णु लोक म चले गय ।

श्रणयाद्य पठद्भक्तचा कथा पुण्या पुरातनीम ।
स तु भक्त्वाखिला कामान ते विष्णपद व्रजेत ॥

श्री वराहपुराणोक्त श्री वकटाचलमाहात्म्य

सम्पणम ।

द्वितीयाश्वास समाप्त ।

श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नम ।

श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्यम् ।

तृतीयाश्वास ।

१ सूतजी से श्रीवेंकटाचलमहात्म्य कहने को मुनियों का प्रार्थना करना ।

शौनकादि मनियो न पूछा कि हे सूतजी ! आपन पहले श्रीहस्तिगिरि तथा जगन्नाथ जी का अदभुत माहात्म्य सुनाया । अब हम श्रीवेकटेश जी का माहात्म्य सुनना चाहते ह । आप उसे भी सुनाइये ।" श्री सूतजी ने कहा कि आपने श्रीवेकटेश जी का चरित्र अच्छा पूछा । म न श्रीव्यासजी से जसा सुना है, वसा ही कहूगा । सावधान होकर श्रवण कीजिए । फिर वेकटाद्रि क माहात्म्य इस प्रकार श्री सूतजी कहन लग ।

कलियग में श्री वकुण्ठ – पवत के माहात्म्य का श्रवण कीतन सब दुखो को मिटान वाला धनेच्छ के लिय धन दाता पुत्रेच्छ के लिय पुत्र दाता रोगियो का रोग विनाशक और जिज्ञासु को ज्ञान देन वाला हे । प्राचीन काल में इस माहात्म्य को सुनकर ब्रह्मा न ब्रह्मपद, शकर न निर्विष होकर सुख, इन्द्र न स्वगलोक तथा सभी लोकपालो न अपन अपन पद को पाया है । अधिकइतना क्या है । श्रीवेकटेश के माहात्म्य श्रवण फल अनत ह ।

कृते वषाद्रि वक्ष्यन्ति त्रेतायामजनाचलम ।
द्वापरे शषशलेति कलौ श्रीवेकटाचलम ।
नामानि यगभदेन शलस्यास्य भवन्ति हि ।।

सत्ययग में वषभाचल त्रेता म अजनाचल द्वापर मे शषाचल और कलियुग म श्रीवेकटाचल इस प्रकार यगभद से पवत के विभिन्न नाम ह ।

२ कृत युग म वृषभाचल नाम होने का कारण ।

कृतयग म वषभ नामक राक्षस शषाचल पर आक्रमण कर तपस्वियो को सतान लगा । उन तपस्वीजनो न भक्तो के अभयकारी श्रीनिवास की शरण में जाकर उनकी स्तुति की ओर श्रीनिवास भगवान उनक सामन प्रकट होकर उनके कष्ट निवारण करन को कहकर अदृश्य हो गय । यह महापराक्रमी राक्षस वृषभ

तुम्बर तीथ में तीनो वक्त स्नान करके श्री नसिहशालग्राम शिला की नित्य आराधना करचे हुए पूजा के अन्त म पुष्प के साथ अपना मस्तक रूप पुष्प तलवार से काटकर भगवान को चढा दिया करता था। तुरन्त ही उसको दूसरा मस्तक हो जाता था। इसी तरह भगवान की आराधना करते – करते पाच हजार वष बीत गय। तब श्रीमन्नारायण के प्रकट होने पर वह राक्षस दण्डाकार पथ्वी पर गिर प्रणाम करके भगवान से कहने लगा कि म न मोक्ष मागता हू न स्वग और न ब्रह्मपद ही किन्तु म आपके साथ यद्ध करने की याचना करता हू । श्री भगवान न तथास्तु' कहकर स्वीकार किया। वषभासुर और श्रीनिवास भगवान का यद्ध प्रारभ होगया। यद्ध में इस राक्षस न उन उन रूपो का धारण किया जिनको श्री भगवान न धारण किया। भगवान न गरुड के भयकर स्वरूप तथा उसके ऊपर अपना विश्वरूप को दिखाया तो उम राक्षस न भी वसा ही गरुडवाहनारूढ विश्वरूप धारण किया। तब श्रीनिवास न सौ धारवाले सुदशन चक्र का प्रयोग किया। इस पर उस राक्षस न चक्रपाणि का दण्डवत प्रणाम करके प्राथना की कि "मने आपके चक्र की महिमा सुनी। चक्र अमोघ है। चक्र से जो मारे जाते ह निश्चय ही वे मोक्ष को प्राप्त होते ह। म आपके उस चक्र से मारे जान पर आपके मदिर (श्रीवकुठ) म जाऊगा।' इस प्रकार कहकर राक्षस ने श्रीहरि को साष्टाग दण्डवत प्रणाम करके यह वर मागा कि 'मेरे नाम स यह पवत प्रसिद्ध हो'। श्री भगवान न वषभासुर को छाती से लगाकर प्रेमपूवक कहा कि 'एसा ही होगा।' फिर भगवान द्वारा प्ररित चक्र से कट हुए वषभासुर न अपना शरीर त्याग किया और वकुण्ठ में चला गया। इस कारण सत्ययग म यह पवत "वषभाचल" नाम से विख्यात हुआ।

३ त्रेतायुग में अजनाचल नाम पडने का कारण।

एक समय केसरी की पत्नी अजनादेवी पुत्रहीनता के दु ख मे व्याकुल होकर मतगमुनि के पास आयी। उसन उस मनिवर को प्रणाम करके अपने शोक का कारण बताया। यह सुनकर मतगमुनि ने कहा कि 'पथ्वी पर पम्पासरोवर से पचास योजन पूव भाग में नसिहक्षत्र हे। उसकी दक्षिण दिशा म नारायणाचल के किनारे स्वामितीथ के उत्तर कोस भर दूर पर आकाशगगा नामक एक विख्यात तीथ है। तुम सुख पूवक वहा जाओ, उसमें स्नान करो और बारह वष तक तपस्या करो। इस पुण्य से तुमको गणवान पुत्र होगा"। मतगमुनि की इस वाणी को सुनकर अजनादेवी नारायण पवत पर गइ। वहा उन्होने स्वामिसरोवर में स्नान अश्वत्थ की प्रदक्षिणा वराह भगवान का नमस्कार करके आकाशगगा के पास जाकर पति तथा मनिवरो की आज्ञा पा उपवास में अनुरक्त तथा बाह्य भोगो से वजित होकर अपन पवित्र शरीर को काष्ठ के समान कडा करके तपस्या करनी

आरभ की। इस प्रकार व्रत समाप्त होने पर महाबल वायदेव ने वीय से भरा हुआ एक फल उसे दे दिया। उसे खाकर वह गर्भवती होगई। दस महीने पूरे होन पर अजना ने उत्तम पुत्र उत्पन्न किया। मनिवरो ने उस पुत्र का नाम हनुमान रखा। इस पवत श्रेष्ट पर अजनादेवी ने व्रत धारण कर पुत्र पाया इसलिय यह पवत अजनाद्रि नाम से प्रसिद्ध हुआ।

४ द्वापर मे शषशल नाम की निष्पत्ति।

एक समय वकुण्ठ म श्री विष्ण भगवान श्री लक्ष्मी जी के साथ विहार कर रहे थ। सुवण की छडी हाथ म लिय हुए श्री शषजी दरवाज पर पहरा दे रहे थ। उसी समय अकस्मात महाबल सम्पन्न वायदेव श्री भगवान के पास जान के लिय बडा शाघ्रता से आय। तब नागराज न सोन की छडी से वायदेव को भीतर जान म रोक दिया। वायुदेव न क्रुद्ध होकर पूछा कि 'क्यो मझ भीतर जान से रोकत हो?' शष न उत्तर दिय। कि म विष्णु की आज्ञा मानकर बठा हू श्रिय पति अन्त पुर में ह। शष क वचन सुनकर जगत्प्राण वाय न कहा कि "पहले जय-विजय पाषद अपन अहकार क कारण सनकादि मनियो से शाप पाकर रावण तथा कुभकण नामक राक्षस हुए थ। इस प्रकार शष और वायु इन दोनो महात्मा ओ म विवाद होन लगा ओ लक्ष्मीजी से उपाय जाकर भगवान विष्ण न वाय से कहा कि इस महाभिमानी शष म क्या कलह कर रहे हो? हरि के य वचनसुनकर वायदेव भगवान को साष्टाग प्रणाम करके चप होगया। शषन चप न रह कर भगवान से कहा कि म बल-पराक्रम शाली हू। मेरे समान बलवान कही भी नहीहे। श्री हरि न शष के इस वचन को सुनकर मस्कुराते हुए कहा कि केवल वाणी ही से पौरुष निश्चित नहीं होता किन्तु क्रिया ही इसका उत्तर है। यहा पर उत्तर की दिशा म सुमेरु पवत का पुत्र आनन्द नामक पवत है। तुम अपनी सारी शक्ति स अपन शरार रूपी रस्सी द्वारा उस पवत को लपेट कर उसे दढ रखो। यदि यह वाय उस पवत को हिला सका तो वह तुम स अधिक बलवान होगा, नहीं तो तुम ही उससे अधिक बलशाली मान जाओग। यह सुनकर शष जी ने अपने अगो को हृष्ट-पुष्ट करके उस आनन्द पवत को अपन शरीर रूपी रस्सी से बाध लिया और वायदेव ने उस पवत का उखाडने के लिय बहुत जोर लगाया। समस्त लोको में खलबली मच गयी। लेकिन वह पवत नहा हिला। तब वायु ने क्रुद्ध होकर पहले से भी अधिक जोर लगाया। फिर इन्द्रादि देवताओ के द्वारा प्राथना किय जान पर भी जब वाय शान्त न हुए तब नागराज न भगवान के भावो को जानकर देवताओ को सन्तुष्ट करने हुए अपने हजार फणो म से किसी एक फण को थोडा सा ढीला कर दिया। फिर महात्मा वायदेव के सम्पक मात्र से वह पवत शषसहित वहा से लाखो योजन दूर दक्षिण की ओर उडकर जान लगा।

पत न अपन पुत्र की यह विपत्ति देखकर वायदेव से प्राथना की कि "मेरे की रक्षा कीजिए । उ होने शेष सहित उस पवत को सुवणमखी नदी क ट किनारे पर रख दिया । फिर देवताओ न प्रेमपूवक वायु से कहा कि ' यह दाचल शष । अश से उत्पन्न है । भग ा र के आवास लये उनका प्ररणा कट हुआ है । इस विवाद के छल से भग वान न तुम्हारे द्वारा इसको यहा इस के तीरपर ला रखा है तुम्हारे सवाद ने भिम प शष न इसे उखाडा तथा वि विष्ण न इस प्रकार तुमको मोहित किया । इसलिय ाब तुमको उचित है शी विष्ण के आ तरिक (भीतरी मित्र) शष जी की प्राथना कर उ हे प्रसन्न नो । उस महात्मा के ऊपर काप कर यथ हो तुमन अपराध किया है । ओ के इस तरह समझान पर वाय का मन नष्ट हो गया और वे शषजी की करन लग कि हे प्रभो ! अज्ञानवश ही हुई मेरी दुष्टता को आप क्षमा य" । इस प्रकार शष से परिवत होने एव शष के अश से उत्पन्न होने के इस पवतराज का शषाचल नाम हो गया ।

५ कलियुग मे श्रीवेंकटाचल नाम होने का कारण

पहले कालहस्ति क्षत्र में पुर दर नामक ब्राह्मण था जो सोमयज्ञ करन शद्ध श्रोत्रिय सत्यभाषी एव दढप्रतिज्ञ था । वह चिरकाल तक पुत्रहीन था । दव वश पूव पुण्य से उस ब्राह्मण को वद्धावस्था म पुत्र हुआ । उस ा नाम उसने माधव रखा । पिता के द्वारा सम । पर उपवीत सस्कार पाकर ौर वेदाग के तत्त्व का ज्ञाता सकल विद्याओ म दक्ष वह बालक माधव ा के समान बढन लगा । फिर कुछ समय बीतने पर उस ब्राह्मण न पुत्र का पाण्डय देश की क या चन्द्रलेखा के साथ कर दिया । वह परम पतिव्रता नकल सेवा शुश्रूषा करके पति की आज्ञा के अनसार रहती थी । किसी दिन ात उस ब्राह्मण कुमार ने कामातुर हो दिन म ही सभोग की इच्छा से पत्नी को बुलाया । चन्द्रलेखा न पति से कहा कि "हे नाथ ! शरीर के ारीर का सग सज्जन पुरुषो द्वारा सम्मत नही है । उसमें भी दिन के को अयाग्य कहा गया है । घर में माता पिता है । अग्निहोत्र है । सव भगवान सूय देख रहे है । काम का त्याग कीजिए' । स्त्री के वचन न र माधव न कहा कि "हे भामिनी ! मुझे सभोग की तीव्र अभिलाषा है । छोड नही सकता । मेरे मनोरथ को तुम अवश्य पूरा करो । तुमको पुत्र ा सौभाग्य पीछे पति के लोक की प्राप्ति होगी' । तब पति के वचन वह उसे नही टाल सकी । उसन पति से कहा कि ' म पानी के लिय लेकर बाहर जाऊगी । आप कुश लाने के बहाने मेरे आगे चलिये । अपना अभीष्ट पूरा कर लीजिए" । वह स्त्री जल के पात्र को लेकर

चली। माधव भी उसके पीछे वट ५ वक्ष की छाया में शीघ्रता से दौडा। उस वनान्तर म उस समय ब्राह्मण कुमार न और एक सुन्दर स्त्री को देखा। उसके अगो का लावण्य ौर सौष्ठव देख ब्राह्मण कुमार मोहित हुआ और अपनी पत्नी मे बोला कि हे प्राणप्रिय ! तरी भक्ति से सन्तुष्ट होकर मेरी इच्छा पूरी होगई, तुम घर जाओ'। पति की आज्ञा स खश होकर चन्द्रलेखा घर चली गई। ज्योही उसकी पत्नी गई त्योही माधव कामदेव के द्वारा पीडित होकर धीरे धीरे उस स्त्री के समीप गया। लेकिन उस स्त्री न अपन पास खडे हुए ब्राह्मण को देखकर कहा कि 'हे मनियो में श्रष्ट ! म अन्त्यज। (चाण्डाल) स्त्री हू। मेरे पास मत आइये। उस बात को सुनकर वह ब्राह्मण कहन लगा 'कि हे सुन्दरी ! तुम कौन हो? तुम्हारे माता – पिता कौन ह तथा तुम्हारा निवास कहा है' ? तब उसन यो उत्तर दिया 'कि मझ पापिनी के बारे में क्या पूछते ह ? मेरा नाम कुन्तला है। म चाण्डाल कुल में उत्पन्न अन्त्यज जाति की स्त्री हू। व्यभिचार करना हमारा वृत्ति ह। मद्य मास भक्षण करती ह। मेरा निवास मध्य देश म ह। आप तो वेद – वेदान्त को जानन वाले ह आपके देखन योग्य भी म नहीं हू। आप मझ छन तथा मेरे साथ क्रीडा करन की इच्छा क्यो रखते ह" ? यह सुनकर फिर माधव बोला कि लोक पितामह ब्रह्मा मेरी समझ में अन्धा ह क्योकि उसन तुझ जसा सुन्दरी को चाण्डाल जाति में उत्पन्न किया और तेरा सारा सौन्दय वन म छिटकी चान्दनी की भाति बकार हो गया ह। तथापि मेरी बुद्धि सवदा तुझ म ही अनरक्त ह। मेरे मन को ब्रह्मा न तुझमे लगा दिया अतएव तुम मेरे मनोरथ को पूरा कर मझे मरन से बचाओ'। तब कुन्तला न फिर कहा कि जो कुलटाओ से क्रीडा करते ह उनके पितर सौ पुरुषान्तरो तक जलते ह – इस तरह धमशास्त्र घोषित करते ह। इसलिये अपनी तुच्छ इच्छा छोडिये। यह सुनकर माधव न विधि से प्रेरित हो शास्त्रो का उल्लघन करके कहा कि 'लवण समुद्र में उत्पन्न नाना प्रकार के रत्नो को तेजस्वी होने के कारण देवतागण स्वीकार करते ह। इसलिय तेरे सौन्दय के कारण ही म तुझसे भोग करूगा चाहे मरन पर म अपन पितरो के साथ नरक हा में जाऊ"। कुन्तला के बहुत रोकने पर भी जब उस ब्राह्मण न न माना और उसका स्पश करना चाहा तो वह उठी और शीघ्र भाग जान का विचार करन लगी। माधव ने उस भागती हुई को दौडकर छ लिया और बलपूवक पकडकर उसे भोगा। वह मानस्विनी स्त्री कुन्तला सभोग के पश्चात उस ब्राह्मण मे बोली कि "हे विप्र ! आज स तुम मेरे पति हुए। तुम चाण्डालत्व को प्राप्त हुए, यज्ञोपवीत को छोड दो। ब्राह्मणत्व को छोड कर उत्तम गोमास का भक्षण एव मद्यपान करते हुए तुम मेरे घर में रहो। माधव एसा ही हो' कहकर चाण्डालत्व स्वीकार कर उसके घर में रहता रहा। बारह वष बीत जान पर वह अन्त्यज स्त्री कुन्तला

मत्र को प्राप्त हुई । उसके दु ख मे दु खी माधव पागलों के समान सवत्र पथ्वी पर घूमने लगा । अकस्मात दवयोग से उत्तर देश के निवासी राजागण वकटाद्रि की तीथ यात्रा करने हुए माधव को दिखाई पडे । दवयोग एव पुण्य से उनके साथ चलता तथा उनक जूठ अन्नों को खाता हुआ माधव वेंकटाद्रि पहुचा । वहा राजगण न मण्डन करना कर भक्ति पूवक सुदशन तीथ मे स्नान किया । उनके साथ माधव न भी अपने सिर का मुण्डन करवा लिया और तीथ म स्नान किया । इससे माधव कल्मष मक्त हो गया । उन राजाओ न अपने पितरों को पिण्डप्रदान किया तो माधव न भी अपने पितरो को मत्तिक पिण्ड बनाकर श्रद्धा पूवक दिया ओर उस कम से उसके पितर मुक्त हो गय सुरवरि की आज्ञा से ।

कि वणयाम पुरुषोत्तमस्य क्षत्रस्य तीथस्य च पुण्यशक्तिम ।
मत्पिण्डदानात्पितरश्च तस्य मुक्ति प्रपन्ना सुरवरिशासनात ।।

दूसरे दिन प्रात काल वे राजा लोग वेंकटाद्रि पर चढन लग । उनके पीछ पीछ शेष पवत पर माधव भी पहुच गया । वे सभी जहा जहा विश्राम करन के लिय ठहरे माधव भी वहा वहा ठहरता हुआ पवत पर चढा । वकटाद्रि के स्पशमात्र से ही उसके पाप कापने लग । उस पवत के माहात्म्य से उसके शरीर से उत्पन्न कोई अग्नि मत्स्य – मास – भक्षण से उत्पन्न उसके पापो को भस्म करती हुई जलन लगी । उसे देखन के लिये ब्रह्म रुद्रादि देवता विमानो म आकर वकटाद्रि के माहात्म्य की प्रशसा करते हुए फूल बरसान लग । यह देखकर श्री ब्रह्माजी ने विमान से उतर कर उस ब्राह्मण माधव के उत्तम शरीर का स्पश करते हुए कहा कि हे माधव ! तुम पापो से मुक्ति पा गये । स्वामि पुष्करिणी के पास जाकर उसम स्नान करके वराह भगवान के दशन करो और अपने शरीर को छोड दो । तुम पाण्डवो क दौहित्र कुल म उत्पन्न होग और कीर्तिमान होकर अकटक राज्य पालन कराग । सुधम का पुत्र आकाश नामक राजा होकर दक्षिण के नारायणपुर में तोण्डमण्डल का पालन करोगे । जगन्माता तुम्हारी पुत्री और जगत्पति तुम्हारे जामाता (दामाद) होगे । तत्पश्चात वकुण्ठ को प्राप्त होओगे" । चतुर ब्रह्मा न इस प्रकार उसको वर देकर उस समय से उस पवत का नाम "वेंकटाचल" रखा । सब पापो को "व" और उनके जलाने को "कट" कहते ह इसलिये ससार म यह पवत 'वेंकटाचल' नाम से प्रसिद्ध तथा कीर्तिमान हुआ ।

सवपापानि वें प्राहु कटस्तद्दाह उच्यते ।
तस्माद्वकटशलोऽय लोके विख्यातकीर्तिमान ।।

प्रात काल जो इस पवत का नाम लेते ह वे गगा एव सेतु के हजारो यात्राओ का फल पाते ह । (भविष्योत्तरपुराण १ अध्याय)

६ श्री भगवान का वैकुण्ठ से वेंकटाचल पर आना।

प्राचीन समय में कश्यपादि मनीश्वर श्री गंगा के तट पर यज्ञ कर रहे थे। उस समय ब्रह्मर्षि नारद जी ने उन ऋषियों से प्रश्न किया कि "हे मुनीश्वरो! आप यह उत्तम यज्ञ किसलिये करते हैं। यज्ञ फल कौन भोगता है? कौन श्रेष्ठ देवता आराध्य है? यज्ञ का फल आप किसे समर्पित करते हैं?" नारद जी के वचन सुनकर सन्देहग्रस्त सब मुनिश्रेष्ठ मिलकर ब्रह्मज्ञानियों में सर्वश्रेष्ठ भृगुमहर्षि से प्रार्थना पूर्वक विनीत होकर बोले कि 'आप सर्वोत्तम देवता की परीक्षा करके हमारे सन्देह का निवारण कीजिए'। स्वयं प्रत्यक्ष देखकर उत्तम देवता का निर्णय करने के लिये भृगुमहर्षि पहले ब्रह्माजी के मन्दिर में गये। वहां सरस्वती जी से सेवित वेद के शब्द से सुशोभित दिक्पालों के साथ नारायण भगवान की स्तुति करते हुए चार मुखवाले ब्रह्माजी को देखकर भृगु साष्टांग प्रणाम कर खड़े हो गये। भृगुजी को देखकर ब्रह्माजी कुछ भी नहीं बोले। इसलिये वह मुनिश्रेष्ठ ब्रह्मा को अज्ञान के कारण अपूज्य जानकर ब्रह्मलोक छोड़कर कैलास को गये। कैलास पर्वत पर पहुंचकर वहां उन्होंने तीन नेत्रवाले कामी एवं निज मन्दिर में पार्वतीजी के साथ विहार करते हुए शिवजी को देखा। उस समय कामी महादेवजी ने आये हुए मुनि जी को नहीं देखा। पार्वतीजी उस मुनि को देखकर लज्जित होकर पति से बोलीं कि 'मुनियों में श्रेष्ठ भृगुजी आये हुए हैं, मुझको शीघ्र छोड़ दीजिए'। पार्वतीजी के इस प्रकार के वचन को सुनकर शिवजी लाल लाल आंख बनाकर उस मुनि को मारने के लिये शीघ्र उद्यत हो गये। मुनि ने शाप से शिवजी का निराकरण किया और वहां से चले गये। उसके उपरान्त श्रीविष्णुभगवान को देखने के लिये वे वैकुण्ठ में पहुंचे। वहां लक्ष्मीजी के साथ श्रीविष्णुभगवान शेष शय्या पर लेटे हुए थे। भृगुमहर्षि ने क्रोधोन्मत्त हो श्रीहरि की छाती पर लात मारी। इस प्रकार मारे जाने पर भी साक्षात् हरि— भगवान ने उठकर मुनि के चरण कमलों को भक्ति एवं विनय पूर्वक प्रणाम किया और भक्ति पूर्वक उनको छाती से लगाकर बोले कि 'हे ऋषिश्रेष्ठ! आपने किसलिये अत्यन्त कठोर देवता एवं मनुष्यों से अभेद्य तथा वज्र से आठ गुना कठिन मेरे शरीर का अपने कोमल चरणों से स्पर्श किया? आपके कोमल पैरों को कितना दुःख हुआ होगा!' ऐसा कहकर भगवान विष्णु ने जल से ऋषि के चरण धोकर फिर वह मंगल चरणोदक अपने सिर पर छिड़क लिया। यह देख भृगुमहर्षि श्रीविष्णुजी को ही देवताओं में सर्वोत्तम मान पृथ्वी पर चले आये और उन्होंने सब ऋषी—मुनियों से बताया कि—

हरिस्सर्वोत्तमः साक्षाद्रमादेवा तदन्तरा।
तदधो विधिवाण्यौ च तदधः शर्वपूर्वकाः॥

45131

साक्षात भगवान विष्ण सबसे उत्तम, तत्पश्चात लक्ष्मी देवी, उनक नीच ब्रह्मा र सरस्वती एव उनके नीचे शिव इत्यादि इस प्रकार से ऊचे नीचे समझे जाते । तब सब ऋषियो न श्रीहरि को ही सवश्रेष्ठ निश्चय कर उन्हीको यज्ञ का ण कर दिया ।

इसके उपरा त एका त म लक्ष्मी जी न श्रीहरि से कहा कि 'जग मय आप वक्ष पर ऋषि के द्वारा चरण से प्रहार किये गये ह । हे नाथ ! मेरे निवास न अथात आपका वक्षस्थल चरण से छुआ गया अत म आपको छोडकर जाती म जाकर करवीरपुर म रहूगी" । इस प्रकार प्रणयपूवक भगवान से झगड लक्ष्मी जी करवीरपुर नामक क्षेत्र मे चली गई । कलियुग के प्रारभ म विष्ण वान यह सोचते हुए कि किस प्रकार म लक्ष्मी जी को सा त्वना दू, वकुण्ठ को । कर गगा के दक्षिण की ओर तीन सो योजन दूर पर सुवण - मखी नामक के उत्तर भाग म तीन योजन चोड और तीस योजन लम्ब वेकटाचल पर । उसके मखाग्र पर वेकटाद्रि मध्य भाग म नसिहाद्रि तथा पुच्छभाग म श्रीशल उस वेकटाचल पर स्वामि पुष्करिणी के दक्षिण भाग मे इमली के वक्ष के मल क दि य स्वच्छ वल्मीक को देख भगवान विष्णु ने उसे अपन रहन के लिय । स्थान माना और वे उसमे लीन हा गये । (भविष्योत्तरपुराण २ अध्याय)

७ वल्मीक में लीन श्रीनिवास को गाय का दूध पिलाना ।

उस प्रकार वल्मीक मे श्रीनिवास का ठहरे हुए दस हजार वष बात गय । के बीत जाने पर एक नपोत्तम चोल राज्य मे शासन कर रहा था । उसके । काल म गाये बहुत दूध देती थी । समय पर मेघ वर्षा करते थ । पथ्वी नस्य समद्ध रहती थी । उस धर्मात्मा राजा के राज्य म सब लोग आन द म रहते थ । उस समय साक्षात ब्रह्माजी न गो का रूप धारण किया और त शिवजी ने वत्स का रूप धारण किया । लक्ष्मी जी ने ग्वालिन का रूप किया । चोल नरेश को वह गाय और बछडा बचकर महालक्ष्मीजी जा न को रूप धारण किय हुए थी अपन स्थान को चली गई । चोल नपति न दूध देन वाली उस गाय को अपने पुत्र के पालन - पोषण के लिय खरीदा राजा की अन्याय गायो के साथ यह गाय भी चरन के लिय वेकटाद्रि पर थी । यह गाय वेकटाद्रि के स्थान स्थान पर घास चरती हुई श्रीनिवास को थी । बहुत समय के पश्चात धेनु रूपी ब्रह्मा स्वामि पुष्करिणी के तीर पर क में ठहरे हुए हरि को जानकर मन म आनन्दित हुए और चारो ओर से धार के द्वारा उनको भिगोने लगे । तब से प्रति दिन धनु - रूपी ब्रह्मा राजा गो के साथ वहा जाकर भगवान की प्रसन्नता के लिये भक्तिपूवक दूध छोड

देते थ और तब से घर पर दूध नही देते थ । अपन पुत्र के लिय गाय के थन म दूध न मिलने देखकर एक दिन चाल राजमहिषी न ग्वाल को बलाकर यह बात पूछी कि रे गोपालक! तू इस गाय के दूध को क्या करता हे? बच्चे को दूध नहा मिलता । क्या तू खद पी लेता हे या बछडा ही पी जाता है? इस प्रकार के वचन को सुनकर ग्वाले न डर के कारण भर्राई हुई आवाज म राजमहिषी से कहा कि म कुछ नहा जानता । राणी न उसकी बात सुन उसे क्रोध से देखा ओर खूब चाबक से मारकर सजा दी ।

८. श्रीनिवास को कुठार से गोपाल का मारना ।

दूसरे दिन दूध के गायब होन की बात का पता लगान के लिय गाय के गले में रस्सी बाध कर गोपाल उसे छोड उसके पीछ पीछ गया । तब गाय ने पहले की भाति उस वल्मीक के पास पहुचकर अपन स्तन मे उत्पन्न सारा दूध उसम छोड दिया । उसको देख शीघ्र ही वह ग्वाला क्रोध से एक हाथ में कुल्हाडी लेकर उस गाय को मारन के लिय तयार हो गया जिसने उसे रानी से सजा दिलवायी । तब उस वल्मीक म ठहरे हुए श्रीनिवास न वात्सल्य दिखलाते हुए, यह सोचकर कि यह गाय तो प्रति दिन दुग्धधार से मेरा अभिषक करती हे और मेरे कारण वह दुष्ट गोपाल इस गाय का कुल्हाडी से मारेगा उसके प्रहार को रोक कर अपन मस्तक पर ले लिया । उस कुल्हाडी के प्रहार स भगवान श्रीवेकटश्वर के मस्तक पर बडी चोट आयी ओर उसम से सात ताल प्रमाण ऊचा रक्त उमडने लगा । वह ग्वाला यह दश्य देखकर मत्य को प्राप्त हुआ । ग्वाले के मर जाने पर वह गौ पवत से उतरकर राजमदिर में आकर बिना बछड के जसा दुखी हो राजा के आगे लोटन लगी । राजा न उस विह्वल गाय को लोटती हुई देखकर चरवाहे से कहा कि "यह गाय किसलिय लाटती हे? इसन और गौओ को कहा छाडा? गौ के साथ तुम जाओ और इसका गोओ म मिला दो ।' राजा की आज्ञा पाकर वह चरवाहा उस गाय के पीछ प छ गया । श्रीवकटाचल पर चढकर वल्मीक के पास पहुच उस मरे हुए ग्वाले के ऊपर से उठती हुई सात ताल प्रमाण ऊची भयानक रूधिरधारा उसन दखी और राजा के घर आकर ग्वाले की सब घटना इस प्रकार कह सुनायी कि ग्वाले की चोट के कारण उस वल्मीक से रक्त श्राव हो रहा हे ।

९ चोलराजा को श्रीनिवास का शाप देना ।

रुधिरधारा की बात सुनकर वह राजा आश्चय यक्त मन से सवारी पर चढकर शीघ्र ही वकटाद्रि पर आय और वाल्मीक के पास ठहर कर यह बात बोले कि यह दुख क्या ह? किस पापी के द्वारा गोपाल मारा गया वल्मीक का रक्त

र जाना और गौ का वृत्तान्त कहना यह कैसी आश्चर्य की बात है ? ' राजा इस बात को वल्मीक में ठहरे हुए भगवान ने सुना । अनन्तर वल्मीक को उससे उत्पन्न हो, श्रीश्रीनिवास भगवान ने स्वामि पुष्करिणी के दक्षिण तट स्थित शलेन्द्र तल पर अधिष्ठित होकर कहा कि ' अरे दुष्ट ! तुम पापी हो, ारी और राज्य मद से उद्धत हो । अनाथ भक्त हीन, दरिद्र वनवासी, पिता से हीन और भाई बन्धु से वर्जित मुझको इस दुष्ट ने तलवार के ा धारवाले कुठार से मारा है जिससे मुझको अत्यन्त दुख हुआ है । उस ि ग्वाले ने मेरा सिर फोड दिया है । जो यजमान घर पर विचार करने नहीं होता है उसके स्त्री पुत्र इत्यादिको से किये गये काम उसका अनिष्ट वाले होते है ।' ऐसा कहकर भगवान विष्णु ने राजा को शाप दिया है कि दुर्बुद्धि । मझे दुख देने के कारण तुम पिशाच हो जाओ ।" तुरन्त राजा चत्व को प्राप्त हुआ । (भविष्योत्तरपुराण ३ अध्याय)

१० चोलराजा को श्रीनिवास का वर देना ।

पिशाच रूप को प्राप्त राजा ने स्वयं निरपराधी होते हुए भी शापोपहत के कारण दुखी होकर श्रीनिवास से कहा कि ' हे देव ! आपने मुझ निरप को बिना विचारे किसलिये शाप दिया ? मझे यह घोर कष्ट क्यो दिया ? " उससे इस प्रकार कहे जाने पर श्रीनिवास भगवान ने बहुत दुखी होकर दिया कि भक्तवत्सलता के कारण मैं ने ऐसा किया । अपने भक्तो को मिलने से मैं नहीं सह सकता । मेरा शाप झूठा और अन्यथ नहीं होता । ग के अन्त तक तुम इसी प्रकार रहोगे ! सत्यसंकल्प के दोष से हम दोनो हुए है । आकाश नाम का एक श्रेष्ठ राजा होगा । वह मुझे अपनी पद्मावती क कन्या देगा , एवं कन्या दान के समय रत्न और वज्र से जडा हुआ सौ भार वर्ण किरीट तिलक में देगा । शुक्रवार के सन्ध्या समय में मैं उस किरीट को ा करूगा । किरीट धारण करने से छ घडी बाद तक मेरी आख जलसे भर ी, तब तुमको सुख होगा । " यह वर देकर श्रीनिवास ने उसे विदा किया । (भविष्योत्तरपुराण ४ अध्याय)

११ श्रीनिवास को श्री वराहस्वामी का वेंकटाद्रि पर स्थान देना ।

एक दिन श्रीवराह ने वृषभ नाम दैत्य का संहार करके लौट आते समय ोदय की वेला में वेंकटाचल पर पर्यटन करते हुए श्रीनिवास को देखा । ' तू है ? तू कौन है ? ' ऐसा गर्जन करते हुए उनके पास वराह भगवान आ पहुचे ।

श्रीनिवास भगवान तुरन्त वल्मीक म विलीन होगय। उनको इस प्रकार अन्तर्धान होते देखकर बुद्धिमान वराहस्वामी न लक्ष्मी के पति श्रीवकटश का वकुण्ठ से आया हुआ जान उनसे सभाषण किया। श्रीवकटश न भी उत्कण्ठा पूर्वक उनको श्वेतवराह जान वल्मीक से निकलकर उत्तर दिया। श्रीमहाविष्णु इन दो भिन्न रूपो म शोभित हुए। श्रीनिवास ओर वराह भगवान का परस्पर सभाषण सुनकर देवताओ न अत्यन्त सन्तुष्ट होकर उनपर फूल बरसाय।

देवताओ के देवलोक म चले जान के बाद श्रीवराह न हरि म पूछा कि वकुण्ठ लोक को छोडकर आप यहा क्या आय। इस प्रकार श्रीवराहस्वामी भगवान के द्वारा पूछ जान पर श्रीनिवास न कहा कि महर्षि भगु के लात मारन से दूषित मेरी छाती को छोडकर श्रीलक्ष्मी कोल्हापूर चली गई। उसी दुख से दुखी हो उत्तम वकुण्ठ को छोडकर म इस पवत पर आया हू और आप के दक्षिण भाग के एक वल्मीक म विलीन रहता हू। उस प्रकार रहत हुए मझको एक ग्वाले ने तलवार क समान धारवाले कुठार से मारा वही घाव मझ को दुख दे रहा ह। उस पीडा का निवारण करन वाले ओषध की खाज मे म न भ्रमण करते हुए आपको दैवयोग से आज देखा ह। यही मझे कलियुग के अन्त तक रहन का सकल्प हुआ। इसलिय आप यहा मझको स्थान दीजिए इस पर श्रीवराह भगवान न कहा कि आप मल्य देकर स्थान लीजिय। तब श्रीनिवास न इस प्रकार फिर कहा कि मेरे यहा धन नही ह। उसके बदले म आपको प्रथम दशन ओर दूध स अभिषिक्त प्रथम नवेद्य यही उत्तम द्रव्य देता हू। म जो कुछ देता हू उसको अगीकार कीजिय ओर मुझ स्थान दीजिए।" यह स्वीकार कर श्रीवराह भगवान न सौ चरण प्रमाण स्थान दिया ओर परस्पर के विनोद से देवताओ म श्रेष्ठ श्रीवकटश और वराह रूपी दोनो भगवान अभक्तो को मोहित करन ओर भक्तो को भक्ति सिद्धि के लिय एक रूप होकर क्रीडा करन लग। तब से श्रीवराह ने अपनी सेविका वकुलमालिका का श्रीवेंकटेश की सेवा के लिय समपण किया और उनके भाजन के लिये उसी वकुलमालिका द्वारा श्यामाकान्न मधु के साथ निरन्तर भजते रहे। वह बाला प्रतिदिन श्रीनिवास को अन्न पान ओषध एव चरणो की सेवा द्वारा पूजा करन लगी।

पहले वह वकुलमालिका श्रीकृष्ण की माता यशोदा थी जिसन अनन्त गण रूप यक्त श्रीकृष्ण का विवाह जो उसका सुख देनवाला था न देखकर उसके निमित्त प्राथना की। श्रीकृष्ण न उने उक्त मनोरथ जन्मान्तर म सफल बनाने का वर दिया। इस वर क अनसार वासुदेव जी श्रीनिवास क रूप में आविर्भूत होकर क्रीडा कर रहे ह यशोदा जी वकुलमालिका के रूप में उत्पन्न होकर उनकी सेवा तथा दशन से आनन्द पा रही ह।

कलौ कलषचित्ताना पापाचाररतात्मनाम ।
रक्षाणाथ रमाकान्तो रमते प्राकृतो यथा ।।
बहुजन्मार्जित पुण्यलभ्यते क्षेत्रदशनम ।
तत्रापि वेङ्कटगिरेदशन मवितद परम ।।

अर्थात कलियुग म कलषित चित्तवाले एव पाप कर्मा में लगे हुए जीवो की के लिय लक्ष्मीपति प्राकृत मनष्यो के जसा रमण करते ह । बहुत जन्मो मे त पुण्य से क्षत्रो के दशन मिलते ह । तिसपर भी श्रीवकटाचल का मुक्ति ला दशन देवताओ को भी दुलभ ह मनुष्य की बात ही क्या ।

(भविष्योत्तरपुराण ५ अध्याय)

१२ आकाशराजा को सन्तान प्राप्ति की रीति।

द्वापर के अन्त मे महाभारत यद्ध के बीत जान पर विक्रमादित्य इत्यादि ओ के स्वग चले जान के बाद कलियुग म सुवीर नामक एक प्रसिद्ध राजा का वंश म जन्म हुआ था । उसका पुत्र सुधम था । उसके आकाश और तोण्डमान के दो पुत्र हुए जो बड यशस्वी, धर्मात्मा दढ भक्त एव नारायण क परायण आकाशराजा जो ज्यष्ट थ तोण्डदेश के स्वामी होकर शासन करते थ । शासन क समय में तोण्डमण्डल स्वग तुल्य होगया । लेकिन बहुत काल तक काई सन्तान नही हुई । इससे दुःखी होकर उन्होन अपन गुरु से पुत्र प्राप्ति कोई उपाय बताने की प्राथना की थी । गुरुजी बोले कि 'हे नपश्रेष्ट यज्ञ य उससे पुत्र होगा । राजा गरु के वचन के अनुसार यज्ञ के लिये भूमि को कर सुवण के लागलो (हलो) से शोधन करने लग । उस समय पथ्वीतलपर हजार दलवाले कमल को देख 'यह क्या ह' इस प्रकार राजा आश्चर्यान्वित । उस कमल के दलो को खोलने पर उसम लक्ष्मी क आकारवाली एक सुन्दर दिखाई पडी । प्रसन्न मन से राजा न कहा कि "यह लक्ष्मी के समान शवाली कमलनयनी कुमारी कन्या मझे देवता के द्वारा दी गई ह ।" इस र कहकर राजा ने उस शिशु को अपन हाथो से उठा लिया । उस समय को आकाशवाणी सुन पडी कि "हे राजा! यह आप की कन्या ह इसका पाषण तथा रक्षण कीजिय । यह आपको कीर्ति रूपी फल देनेवाली ह ।" प्रकार आकाशवाणी सुनकर राजा बहुत आनन्दित हुए और उस कन्या को ही ग्रहण कर अपनी स्त्री से कहा 'हे भद्रे! सुनो, देवताओ स दी हुई इस सुन्दरी पुत्री का अपन गभ से उत्पन्न पुत्री के समान पालन करो ।" एसा र उसके हाथ म समपण करके पद्मोद्भवा होने के कारण उस कन्या का नाम वती रखा ।

कन्या पद्मावती के घर आने के पुण्य से आकाशराजा की पत्नी ने गर्भधारण किया। राजा ने पुंसवन संस्कार और पांच मास हो जाने पर सीमन्त के संस्कार विधि पूर्वक कराये। नव मास व्यतीत होने पर उस साध्वी ने दसवें मास में उत्तम पुत्र को जन्म दिया। पुत्र जन्म के आनन्द में राजा ने छत्र चामर के सिवा अपना सर्वस्व धन दान किया। बारहवां दिन आनेपर उस पुत्र का ऐसा नामकरण किया गया कि वह वसुदान नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ। निष्कलंक चन्द्रमा के समान बढते हुए पुत्र पुत्री को देखकर राजा सम्पूर्ण आनन्द पाते थे। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत हो जाने पर पद्मावती बाल्यावस्था को पारकर युवती हुई। उस युवती कन्या को देखकर राजा चिंता करने करने लगे कि मैं यह कन्या किस वर को दूं। इसी फिक्र में राजा डूब गये।

१३ पद्मावती को भावि शुभ नारद मुनि से बताया जाना।

वसन्त के एक दिन पद्मावती फूल तोडने के लिये अपनी सखियों के साथ उपवन में गई। फूल चुन कर पद्मावती एक वृक्ष के मूल में बैठ गई। तब वृद्ध तपस्वी के रूप में महर्षि नारदजी वहां पर आये। पद्मावती उन्हें देखकर अत्यन्त कातर हुई। नारदजी ने उसे इस प्रकार समझाते हुए कहा कि मैं तुम लोगों का कुलगुरु हूं। मुझे अपने पिता के तुल्य जानो। अपना हाथ दिखलाओ। मैं तुम्हारे भावि सुख को बताऊंगा। यह सुन धीरज धर कर पद्मावती ने उन्हें अपना हाथ दिखलाया। नारदजी ने उसका हाथ देखकर कहा कि लोकेश्वर रमापति तुम्हारे पति होंगे।" यह कहकर वे अन्तर्धान होगये। (भविष्योत्तरपुराण ६ अध्याय)

१४ पद्मावती को दर्शन देकर उससे श्रीनिवास का सभाषण करना।

उसी दिन श्रीनिवास ने मृगया विनोद के लिये घोडेपर सवार होकर वेंकटाचल से उतर कर उस प्रान्त के जंगल में बाघ आदि घातक जानवरों का शिकार किया। इसके बाद एक मदमत्त हाथी को देखकर शिकार करने के लिये उसका पीछा किया। वह श्रीनिवास को आध योजन की दूर ले गया। पद्मावती के उपवन में पीछे घूम कर सूंड उठा गरज कर श्री हरि को दण्डवत प्रणाम कर यह हाथी वन में चला गया। हाथी के चले जाने पर पद्मावती श्रीनिवास को दीख पडी। गरजते हुए हाथी को देखकर पद्मावती अपनी सखियों सहित भयभीत होकर एक वृक्षकी ओट में छिपकर देख रही थी। उसे देखकर श्रीनिवास उसकी ओर गये। श्रीनिवास का आना जानकर पद्मावती ने अपनी सखियों से धीरे से कहा कि उसका वृत्तान्त पूछना चाहिये। अपने समीप आये हुए श्रीनिवास से सखियों ने पूछा कि 'आप कौन हैं? किस लिये यहां आये हैं? आपको यहाँ

ा काम है ' यहा पर पुरुषगण नही ह आप चले जाइय ।" श्रीनिवास न
ाब दिया कि राजपुत्री से मुझ काम है । पद्मावती की सखिया बोली—
ापको क्या काम है । आप कहा रहते ह ? आपका क्या नाम है । आपके
ा पिता कोन ह ? आपके भाई बहन कौन है । कौन कुल और गोत्र आप का

उनके इस प्रकार के वचन सुनकर जगदीश्वर बोले— 'क या की इच्छा
ी मेरा मुख्य काय हे उसके पश्चात म तुम लोगो से बोलता ह । उनसे इस
ार बालकर पद्मावती देवी से श्रीनिवास कहन लग कि "बडा ने हमारा कुल
षपुत्र (च द्रवश) बताया हे । मेरे पिता ासदेव, मेरी माता देवकी मेरे बड
ई बलभद्र मेरी भगिनी सुभद्रा पाथ (अजन) मेरे मित्र और पाण्डव मेरे
धव वग ह । कृष्ण पक्ष के अष्टमी के दिन मेरा ज म हुआ । वण माला के
ा है । इसलिय विद्वान लोग मुझ वण से और नाम से भी कृष्ण ही कहते ह ।
मेरा वत्ता त है । अब तुम्हारे नाम गोत्र कुल आदि की वार्ता म सुनना
ता हू । पद्मावती न अपना यह वत्ता त बताया कि ' म आकाशराजा की
ी हू नाम मेरा पद्मावती हे मझ च द्रवश एव अत्रि गोत्र वाली जानो । अब
ा शीघ्र चले जाइये । उसका यह निष्ठुर कथन सुनकर श्रीनिवास बोले—
ह निष्ठुर वाक्य क्यो बोलती हो ? धीरे क्यो नही बोलती ? म तुम पर आसक्त
र आया हू । म तुम्हारे लिये योग्य पात्र हू । अत तुम अपने को मुझ
पित कर स्वगसुख प्राप्त करो यथ के इन िष्ठुर वचनो से क्या लाभ हे ?
ात पद्मावती उनके वचनो को सुनकर क्रोध से रक्त नत्र वाली होकर बोली
मूढ ! तू अवाच्य वचन बोलता है क्या तेरी जान की इच्छा नही है ?
ाशराजा तुम्ह देखकर मार डालग इसमें स देह नही है, जब तक वे नही
ी ह उसके पहले ही तुम यहा से अपन घर चले जाओ ।" फिर श्रीनिवास
ा— जिसने ज म लिया हे उसको पूव कम के अनसार मत्य निश्चित हे ।
ा का निश्चय जानकर ही तुम्हारे साथ रमण करन की इच्छा करता हू ।
ात्मा आकाशराजा निरपराध को क्यो मारेग ? तुम क या हो और म हू वर ।
में राजा की दष्टि से अ याय क्या है ? यो कहते हुए श्रीनिवास के समीप
ापर पद्मावती इस प्रकार बोली तुम माता पिता भाई ब धु इत्यादि मुख्य
ी को छोडकर जगल में घमते हुए अनाथ होकर यथ ही क्यो मरते हो ? '
बातो पर ध्यान न देकर श्रीनिवास बोले कि 'ब्रह्मा से जो लिखा गया हे
यथ नही होगा जय हो अथवा पराजय, तुमसे भोग अवश्य करूगा ।" इस
ार कहकर जब श्रीनिवास न पद्मावती के निकट जान की चेष्टा की तब
ावती ने अपनी सखियो के साथ श्रीनिवास पर पत्थर मार उसे अपन पास न
ा दिया । पत्थरो के प्रहार की पीडा से यथित होकर श्रीनिवास वल्मीक म
ा करके शय्या पर लेट गय । (भविष्योत्तर पुराण ७ अध्याय)

१५ श्रीनिवास का वकुलादवि से अपनी अभिलाषा बताना

श्री वकुलादेवी बहुत भक्ति भाव से सयक्त होकर सूप (दाल) अपूप (पुआ) इत्यादि सखियो से यक्त छ प्रकार के अन्न लेकर श्रीनिवास की सेवा के लिय आयी। दीघनि श्वास छोडते हुए आसू बहाते हुए मौन रहे श्रीनिवास का देखकर वकुलादेवी इस प्रकार बोली– हे गोविन्द ! जागो । दिनम स्नान की तुम्ह आदत तो नही ह। तुम्ह राते हुए भी म न कभी नही देखा। अब क्यो दुखी हाते हो? तुम्हारे मन म क्या हे – सो यथाथ मझसे कहो। उत्तम अन्नादिक ले आई ह। उठ भोजन करन आओ श्रीनिवास को कुछ भी न बोलते देखकर वकुलादवी फिर बोली – वन म तुमन क्या देखा हे? तुम सदा बफिक्र रहते हो। अब क्या फिक्र म पड हुए हो? तुम्ह क्या चाहिय – मझ से कहो। तुम्ह देखकर मझ दुख हाता हे। तुमन क्या वन म किसी कन्या को देखा हे? तुम्ह मुग्ध करनेवाली वह पुण्यवती कोन ह? मझसे कहो किसके सगम की इच्छा से तुम्हारे चित्त म दुख होता हे। म तुम्हारा काय क्षण मात्र म कर दगी । इस प्रकार प्रार्थित होकर श्रीनिवास दुख के कारण धीरे धीरे बाले – ' म ने आज वन म पद्मावती नाम की एक श्रेष्ठ सुन्दरी कन्या देखी हे। उसे देखकर मेरा मन काम और मोह के वश हो गया। एसी कन्या बहुत ज म म उपाजन किय हुए पुण्य से ही मिलेगी। वह सुन्दर अगवाली कन्या आकाशराजा की पुत्री है। तुम एसा उपाय शीघ्र करो कि उसके साथ मेरा सगम हो जाय। उसके बिना म नही जीऊगा। यह सत्य मानो। म उसके निकट जान पर पत्थरो की वर्षा से मारा गया हू। मेरे निय तुम उसका सम्पादन करो। उसे देखकर तुम जानोगी कि वह मेरे लिये योग्य वधू हे और मेरी इच्छा ठीक मानकर तुम प्रसन्न होगी '।

१६ पद्मावती का पूर्वजन्म वृत्तान्त।

श्रीनिवास की अभिलाषा जानकर वकुलादेवी न फिर यह प्रश्न पूछा कि हे जगन्नाथ ! आपन जो कन्या देखी है वह कहा पर हे, उस माग को कहिए। म शीघ्र जाऊगी। वह कन्या पूव म कान थी? वह किस लिए पृथ्वी पर उत्पन्न हुई? वह सब वृत्तान्त सत्य – सत्य मझसे कहिए । इस प्रकार वकुला से पूछे जान पर श्रीनिवास भगवान मन्द वचन बोले कि पद्मावती के पूव ज म का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनो। पहले त्रेता म राम – रूप से म न अवतार धारण किया था। पिता और माता के वचन सुनकर भाई लक्ष्मण और सीता के साथ म दण्डकारण्य म आया। तब रावण नामक लक के कण्टक राक्षस मझ जगत्पति की सती माता का हरण करके लका जान के लिय तयार हुआ लक्ष्मण भी बड भाई को देखन के लिय सीता द्वारा बल पूवक भज दिया गया था। वह राक्षसेन्द्र वह

समय पावर सीताको विमान पर चढान को उद्यत हुआ था। तब वह सीता हा राघव ! हा लक्ष्मण !' 'इस प्रकार रोन और आतनाद करन लगी। उसे सुनकर ह॒व्यवाहन (अग्निदेव) सीता की रक्षा करने के लिय क्रूर रावण से बोले कि हे रावण ! धोख म आओ मत। यह जनकजी की पुत्री नही हे। तुम्हारे भय ने जानकी राघव द्वारा मेरे पास रखी गई हे। तुम मझ प्रिय लगते हो इसलिय म तुम्हारी सहायता करूगा म तुम्हे सच्ची सीता दूगा। राक्षस का इस प्रकार धोखा देकर और जानकी को अपन लोक म लाकर अग्निदेवने उसकी पूजा करन के लिय उस सुदरी को शीघ्र स्वाहा में स्थापित किया। पहले रावण के दुराचार से उसके वध की प्रतिज्ञा कर क्रोध से अग्नि म प्रवेश की हुई और नब से समय की प्रतीक्षा में ठहरी हुई वेदवती नाम की सती को माया स सीता का आकार धारण करवा कर वह अग्निदेव रावण को दिखाते हुए उसको प्रसन्न करने के लिय बोले हे निशाचर इस यथाथ सीता को लेकर तुम शीघ्र जाओ।' अग्निसे इस प्रकार कहे जान पर रावण उस अवास्तविक सीता को लेकर शीघ्र चला गया और उसे अशोक वन में रखा। पश्चात रामचन्द्रजीने वहा जा खल रावण को उसके गणो सहित मारकर यद्ध के अत म सीता को पाया और शोधन के लिय उससे अग्नि प्रवेश करवाया। जब अग्निदेव सच्ची सीता को लाय नब सीता द्वय आविर्भूत हुआ। वहा सीता–यगल को देखकर रामचद्रजी अपनी पत्नी सीता से बोले कि वह तुम्हारे जसे रूप वाली कौन है? रामचद्रजी से सीता उत्तर में इस प्रकार बोली कि यह वेदवती है जिसन मुझपर दया करके विना कारण ही के स्वय दुख भोगा हे। इस पर अनग्रह कीजिए। उससे विधि पूवक विवाह कर उसे ग्रहण कीजिए। सीता के वचन सुनकर श्री रामचन्द्र बोले कि हे भामिनी, अभी म न एक पत्नी व्रत ले लिया ह सो तुम जानती हो, अब म इसे ग्रहण नही कर सकता। द्वापर म अगीकार करूगा, ऐसा वरदान बहुतो को दिया हुआ हे अतएव कलियुग म तुम्हारा वचन पूरा करूगा नब तक यह ब्रह्मलोक म ब्रह्मा से पूजित होती रहेगी। उसी का पद्मावती के नाम से जन्म हुआ। मेरा वचन असत्य कभी नही हो सकता। उससे मेरा विवाह अवश्य होना चाहिये इस प्रकार पद्मावती के पूवज म का वत्तान्त सुनकर आनद से वकुलादेवी बोली कि 'आकाशराजा के मदिर म पद्मावती को देखन जाऊगी। श्रीनिवास खश हो वकुला के द्वारा दिय हुए उत्तम अन्न का भोजन कर अलकृत एव स्वस्थ चित्त होकर रहे थ।

१७ पद्मावती की सखियो से भेंट

वकुलादेवी घोड पर चढकर सुवणमखरी को पारकर अगस्त्य के आश्रम पर पहुची। वहा शिवजी के मदिर म उसन पद्मावती की सखियो को देखा और उनसे

आप कौन है ' एसा बोली । उसमे इस प्रकार कहे जाने पर वे बालाए इसके उत्तर म बोली कि ' हम लोग सदा आकाशराज के समीप रहती ह ।' यह सुन पद्मावती का वत्तान्त सुनने की इच्छा से वकुलादेवी न उनसे पृछा कि " म आपका सम्पूण वत्तान्त सुनना चाहती हू उसे कहिय इस प्रकार पूछ जाने पर वे बोली कि इससे पूव दिन म हम पद्मावती के साथ फल तोडन के लिय उपवन में गइ । वहा फूल तोडते समय घोड पर आरूढ काम देव के समान रूप वाले एक पुरुष आय । उन्ह हम सबो न देखा । वे किरात के वेष मे थे । पद्मावती को देखकर वह अवाच्य वचन कहने लग । पद्मावती रुष्ट होकर उनसे कलह करन लगी और पत्थरा से मारा । वह घोड को छोड कर उत्तर की ओर चले गय । उनके चले जान पर पद्मावती मूच्छित हो गिर पडी । हम उसे रथ पर चढाकर राजनगर में ले गइ । राजा न सोचकर उसके क्लेश का हेतु जानने के लिय बहस्पति को बुलवाया । गरुजी उसकी स्थिति जानकर इस प्रकार बोले कि ' हे राजा ! सुनिय, यह कन्या फलो के लिये वन में जा, एक पुरुष को देखकर डर गई । उसकी शान्ति का उपाय कहता हू सुनिये । अगस्त्याश्रम म ग्यारह ब्राह्मणो से शिवजी का अभिषक करवावे । वह स्वस्थ हो जायगी ।" इस प्रकार गरू स कह जाने पर राजा न ब्राह्मणो को अभिषेक करने की आज्ञा दी । उन ब्राह्मणो के साथ हम अभिषक की सब सामग्री लेकर यहा आई ह । यह हमारा वत्तान्त है । अब अपना वत्तान्त सुनाइय । इस प्रकार पद्मावती की सखियो से कहे जान पर वकुलादेवी बोलीं कि ' म श्रीहरि की सेविका हू । वकुला मेरा नाम है । म जब वेङ्कटेश के आदेश से यहा आई हू । धरणी देवी से मझ काम है । आप एसा करे कि मझ धरणी देवी के दशन हो जाय ।' "अभिषक के समाप्त हो जान पर हम धरणी देवी के पास जायगी । यदि आप तब तक प्रतीक्षा करे तो हम आपको अपने साथ ले जाकर धरणी देवी के दशन कराय ' —एसा पद्मावती की सखियो से कहे जान मे वकुला एसा ही हो " कह कर वही प्रतीक्षा करती रही ।

१८ श्रीनिवास का (पुल्कसी) रूप से नारायणपुरको जाना

इस प्रकार वकुला के चले जान पर श्रीनिवास को विश्वास नहा हुआ कि उससे काय सिद्ध होगा । इसलिये उन्होने स्वय नारायणपुर जान के विचार से पुलिन्दस्त्री (पुल्कसी) का वेष धारण किया । उस वष म उन्होने लम्बा उदर और लम्ब कान धरकर गजा (घघची) मणियो तथा शख के हारो से अलकृत कर लिया । सात मास की अवस्था वाले शिशु को अपन पीठ से बाधकर धान्य से भरी हुई बास की टोकरि अपने मस्तक पर रखी । हाथ मे एक छडी लिये हुए नारायण पुर में पहुच । ' भावि बताऊगी ' एसा कहती हुई नारायण पुर की वीथियो म घूमन — फिरन लगी । उसके कहे हुए वचन सुनकर नगर की स्त्रिया रानी धरणी

के पास जाकर उसकी बाते बोला। उसकी आज्ञा पाकर नागरिक स्त्रियो
न्द (पुल्कसी) स्त्री को राजमंदिर म आन के लिये बलाया। 'क्या हसी
खल के लिये मुझ राजमंदिर म बलाती हो -एसा कहती हुई उसन उनके
जाने से इनकार किया। तब रानी धरणी देवी ने स्वय उसके पास आकर
लाया। उस पुलिन्द वनिता न राज मंदिर में प्रवेश कर इस प्रकार कहा कि
वी! स्वामी नारायण मेरे भर्ता ह। यह बच्चा उन्ही से उत्पन्न हुआ हे। उन से
पित होकर म तुम्हारे लिये तुम्हारे मंदिर म आयी हू। म भत भविष्य तथा
न को जानकर बता सकती हू। मेरे वचन असत्य नही हो सकते।' उसकी
सुनकर धरणी देवी न उसे भीतर ले जाकर आसन पर बिठाया। पुल्कसी
णी देवी से कहा कि स्नान करके आओ।" राणी के स्नान कर आन पर
कहा कि देवताओ का प्रीतिसाधक एक वायन (दक्षिणा के साथ भक्ष्य पदार्थ)
पुलिंदा के इस वचन का सुनकर वह धरणीदेवी मोतियो के चावल से
हुआ सुवण का सूप ले शीघ्र ही सामन रखकर उससे बोली कि हे महाप्रज्ञ!
सत्य कहो, मेरे दुख का अन्त कब होगा। पुलिन्दा ने कहा कि म सत्य
ी हू, मेरे बच्च को रस के साथ अन्न दो।" धरणीदेवी का दिलवाया हुआ
न्न जब बच्च न नहीं खाया तब मा न ही स्वय खाकर ताम्बूल (पान-सुपारी)
। इस प्रकार पुलिन्दा के मागन पर धरणीदेवी न इलायची लवग कपूर
ल्ली के साथ उसे ताम्बूल अपण किया। उसे लेकर बच्च को गोद मे बिठला
पुलिन्दा न भावि के वचन कहना आरभ किया।

(भविष्योत्तर पु० ८ अ याय)

१९. पुलिन्दा का पद्मावती के अस्वास्थ्य का कारण बताना

' इसके पहले दिन पद्मावती घोड पर चढे हुए किसी पुरुष को देखकर मोह
काम ज्वर से पीडित हो गई। पद्मावती श्री वेंकटेश को अपना पति बनाना
ी हे। कल जो पुरुष किरात वेष धारण किय हुए घोडे पर सवार होकर
था वह साक्षात श्रीनिवास ही है। उसे यह कन्या देकर विवाह किया जाय
सकी पीडा दूर हो जायगी। वकुण्ठवासी श्रीहरि वेङ्कटाद्रि पर श्रीनिवास रूप
ते ह। उनके घोड को तुम्हारी पुत्री न पत्थरो से मरवाया है। वे पुरुष इस
ध को राजपुत्री के गोरव से क्षमा करते ह। उनके साथ पद्मावती का विवाह
जाय तो वह सुख प्राप्त करेगी नही तो दुख पायगी और तीन दिनो में,
हे, मर भी जायगी। बिना माग कसे अपनी कन्या दू-ऐसा स देह मत
। क्षणभर समय के पश्चात बहुत वृद्धा कोई अबला पद्मावती की याचना
यहा आवेगी। मेरे वाक्यो का विश्वास करते हुए तुम राजा को प्रेरित करो

और अपने पति के भाई तोण्डमान और उसके सुहृद वर्गों को समझाकर श्रीनिवास के साथ पद्मावती का विवाह कर दो। ऐसा करने से वह जीवित रह सकेगी। ऐसा कहकर पुलिन्दा अपने घर चली गई।

२० धरणीदेवी से पद्मावती के द्वारा श्रीनिवास के प्रति अपने प्रेम का वर्णन

पुलिन्दा के चले जाने पर धरणी देवी अपनी पुत्री के पास जाकर कहने लगी कि हे पुत्री तुम्हारी क्या अभिलाषा है। तुम्हारी इच्छा मैं पूरी करूंगी। मुझ माता से यदि तुम अपनी अभिलाषा नहीं बताओगी तो मैं विषपान कर प्राण त्याग दूंगी। माता की बातों से विवश होकर पद्मावती ने अपनी अभिलाषा धीरे धीरे प्रकट की कि मुझे अपनी इच्छा प्रकट करने में संकोच हो रहा है। फिर भी चूंकि तुम मुझे लाचार बनाती हो इसलिये मैं कहती हूं सुनो। तुमसे अनुमति लेकर सखियों के साथ मैं फल बीनने के लिये बगीचे में गयी। मैंने वहां एक पुरुषोत्तम को देखा था। उस पुण्डरीकाक्ष पर मेरा मन संलग्न हो गया। उनको प्राप्त किये बिना मैं जी नहीं सकती। यह सत्य है तुम विश्वास करो। वह सर्वोत्तम पुरुषोत्तम ही हैं। शंखचक्र गदाधारी हैं। उनके कण्ठ-प्रदेश में कौस्तुभ-रत्न चमक रहा है। उन्हीं के कारण मैं इस प्रकार व्यथित हूं।' यह सुनकर धरणीदेवी ने अपनी पुत्री को सान्त्वना दी और पुलिन्दा का कथन तथा अपनी पुत्री पद्मावती का वृत्तान्त आकाशराजा को कह सुनाया।

२१ वकुलादेवी का धरणीदेवी के पास पद्मावती की सखियों के साथ आना

अगस्त्याश्रम में शिवजी का अभिषेक समाप्त होने पर पद्मावती की सखियां वकुलादेवी को साथ लिये हुए सब सामग्रियों को सिर पर रख नारायण पुर में ब्राह्मणों के साथ लौट आयीं। धरणीदेवी ने ब्राह्मणों की विधिपूर्वक पूजा कर अपनी पुत्री को उनके आशीर्वाद दिलवाये। इसके पश्चात स्वयं भोजन करके पद्मावती की सखियों से उनके साथ आयी हुई स्त्री का परिचय पूछा। उन्होंने इस प्रकार निवेदन किया- इसका निवास-स्थान श्रीवेंकटाचल है। यह श्रीनिवास की सेविका है। इसका वकुलमालिका नाम है। देवी से कुछ निवेदन करने के उद्देश्य से हमारे साथ आयी। उसके आगमन का प्रयोजन उससे पूछने पर वही स्वयं प्रकट करेगी। ऐसा कहे जाने पर कल्याणी वकुला से धरणीदेवी बोली कि स्वच्छ रत्नों की पीठ पर बैठिये आप अपना कार्य कहें आज ही मैं उसको करूंगी। वकुला बोली कि मैं कन्या की इच्छा से आयी इसके अतिरिक्त और

काय क्या हे ?' यह सुनकर धरणीदेवी न कहा कि हम तो वर की खोज म ह इसलिय यह सब कह सुनाइय कि वर कोन है, उसका कोन देश हे? गात्र नाम तथा नक्षत्र कोन हे? उसका कौन कुल हे? वकुला न उत्तर म कहा कि हे देवी! कृष्ण उनका नाम ह। वसिष्ठ गोत्र है। श्रवण उनका नक्षत्र हे। चन्द्रवश मे उनका ज म हुआ है। वेकटाचल उनका आवास हे। वे विद्वान कुलीन बुद्धिमान बलवान तथा यवा हे। वे बहुत आचार– विचार वाले पच्चीस वष की अवस्था वाले ह।' यह सुन धरणीदेवी प्रसन्न हो बोली कि आपकी बातो से मुझे एक शका हुई हे। आपने कहा – वे भाग्यवान कुलीन बुद्धिमान बलवान युवा तथा विद्वान ह तो फिर उनका अभी तक विवाह क्या नहा हुआ?" यह वचन सुनकर वकुला हरि का स्मरण कर धरणीदेवी से य वचन बोली कि बाल्यकाल मे ही उनका विवाह हुआ था परतु उससे सन्तानोत्पत्ति नही हुई। यह देखकर दूसरा विवाह करन को उद्यत ह। बात यही ह इसके सिवा कोई दोष उनमे नही हे।" यह सारा वत्तात सुनकर धरणीदेवी सन्तुष्ट हुइ और आकाशराजा के पास पहुच कर उनसे बोली कि 'यह वकुला श्रीवेकटाचल से कन्या के लिये आयी है। आप भी पुरोहित को बलाकर वर – वध के गोत्र नक्षत्र इत्यादि की अनकूलता विचार कर शुभमहूत का निश्चय कराइय। पद्मावती भी श्रीवेकटाचलवासी श्रीनिवास को ही चाहती हे। पत्नी की बाते सुनकर आकाश राजा आनन्द से भर गय और बोले कि अहो! पूव पुण्य के प्रभाव से हम लोगो को ऐसे मगल प्राप्त हए ह। हम लोगो के सब पितर कृताथ और मक्ति के भागी हुए ह। तुम्हारी वाणी रूपी अमत पीकर म हष से पुलकित होता हू।

२२ आकाशराजा का बृहस्पति तथा शुक्रजी को बुलाकर उनसे परामर्श करना

उसी बद्धिमान श्रीनिवास को अपनी पुत्री दूगा कहकर आकाशराजा न अपनी कन्या पद्मावती को सान्त्वना दी और अपन पुत्र को स्वग से गरु बहस्पति को बुला लाने के लिय भजा। बहस्पति के आन पर राजा विधिपूवक उनकी पूजा करके उनसे बोले कि 'आपकी आज्ञा से म अपनी पुत्री का विवाह श्रीनिवास के साथ करूगा जो अच्छ वर समझ जाते ह। एक साध्वी स्त्री कन्या के लिय आयी थी, गोत्र ओर नाम ज्ञात हुआ। तथापि म आपकी आज्ञा से ही विवाह करना चाहता हू।' राजा की बात सुनकर बहस्पतिजी उनसे बोले कि हे राजन म कभी कभी पथ्वी तल पर आता ह! इसलिये म अच्छी तरह से श्रीनिवास को नहीं जानता। शकदेव जी सदा भूलोक म उन्ही के आश्रम मे रहते ह, इसलिय वे अच्छी तरह उनकी स्थिति जानते ह। वे उनके सम्बन्ध म कह सकते ह उनको

बुलवाइय । गुरु मे ऐसा कहे जान पर राजा ने शकदेवजी के आश्रम में अपन भाई तोण्डमान को उन्हे लान के लिय भजा । वह शीघ्र जाकर शकयोगीन्द्र से बोले कि हे तपस्वियो म श्रेष्ठ' मेरे बड भाई न यह स देश आपसे कहन को मझ भेजा है कि गरुओ की मान्य पद्मावती अब विवाह के योग्य हो गयी है । राजा श्रीनिवास को वह कन्या देकर विवाह करना चाहते है । औचित्य या अनौचित्य का विचार करन के लिय गरु बृहस्पति जी बलाय गय ह । उसी कायपर आज आपको राजा ने बलाया है । योग्य और अयोग्य का विचार करके शभपत्रिका लिखन के लिय आज अवकाश पाकर नगर म पधारिय । यह सुन शक महामनि जी माध्याह्न स ध्या कर राजा के छोटे भाइ के साथ नारायणपुर गय । आय हुए मुनि को देखकर अर्ध्य पाद्य से उनका सत्कार करके राजा न उनस कहा कि हे मुनीन्द्र' आप दोनो से अनुमोदन किय जान पर म श्रीनिवास को अपनी कन्या देकर विवाह करूगा – म न यही वर ठीक निश्चय किया है ।' यह सुनकर श्री शकदेवजी बोले कि हे राजन्द्र' इस कन्यादान म आप सन्देह मत कीजिए । आप धन्य ह आपका कुल पवित्र हो गया । आपके पितर भी स्वग गय । आपन पूर्व जन्म में पुण्य किया है इसलिय साक्षात कमलनयन भगवान श्रीनिवास आपके जामाता हुए ह – इसलिय आपसे बढकर कोई पुण्यात्मा नही है । अतएव इसम विलम्ब नही करना चाहिय शभ कम शीघ्र ही करना चाहिय । सब भोगो को छोडकर कन्दमूल और फल खाते हुए तपस्या द्वारा आराधना करन पर भी हम उस प्रभ श्रीनिवास को नही देख सकते आपकी सगति से ही हम लक्ष्मी के साथ श्रीनिवास को देखेंग । आपकी शभ सगति हम लोगो को जन्म जन्म म मिले ।

२३ श्रीनिवास को पद्मावती देने के विषय मे राजा की प्रतिज्ञा

राजा न श्री शुकदेवजी के वचन सुनकर अपन को कृताथ माना और उनसे यह प्राथना की कि गोत्र – नक्षत्र योग के बलाबल पर विचार कीजिए और राजा ने अपना अत्रि – गोत्र तथा पद्मावती का मगशीष नक्षत्र बताया । वकुलादेवी ने श्रीनिवास का गोत्र वसिष्ठ एव नक्षत्र श्रवण कहा । उनके वचन सुनकर गुरु बृहस्पति जी योग का विचार करके हष से कहा कि नाडी कूट योनि कूट तथा सूत्र कूट सब सानुकूल ह ग्रह भी सब शभ दृष्टि के ह इसलिये अपने बन्धु मित्र से मत्रणा कर कन्यादान कीजिए ।' गरुजी के वचन सुनकर राजा ने बन्ध मित्रो को बलाया और कन्यादान के सम्बन्ध म उनसे मत्रणा की और पुण्याहवाचन करवा कर उनके समक्ष हाथ उठाकर प्रतिज्ञा की थी कि श्रीनिवास को पद्मावती नाम्नी अपनी कन्या दूगा ।'



श्रीपद्मावतिदेवी तिरुचानूर

२४ श्रीनिवास को आकाशराजा का विवाहनिश्चय पत्रिका भेजना

आकाशराजा ने फिर पूछा कि 'हे विप्र द्र' सकल्प के उपरा त मझे क्या करना चाहिये? देवताओ के गरु बहस्पति बाले कि श्रीनिवास के लिये पत्र लिखकर उनको बुलान के लिए उनके पास ब्राह्मण भजिय ।' अपने गरु के वचन सुनकर राजा ने बहस्पति से कहा कि जो कुछ श्रीनिवास को लिखन योग्य है सो कहिये ।' आकाशराजा के वचन सुनकर लिखन का विषय बहस्पति न प्रतिपादित किया। राजा न गुरु के बताय हुए माग से प त्रिका इस प्रकार लिखी। "वेकटाचल निवासी श्रीनिवास को आकाशराजा नामक म आशीर्वाद देता हू । आपके आश्रय की इच्छा करते हुए हम लोग अपन ब ध मित्रो के साथ आपके अनुग्रह मात्र से ही यहा नारायण पुर मे कुशल से रहते ह । अपना क्षम कुशल पत्रद्वारा बताइय । चत्र शुक्ल त्रयोदशी को यह पत्र लिखा जाता हे । म अपनी पद्मावती नामक क या आपको दूगा—यही मेरा विचार हे । इस विवाह को विधिपूवक अगीकार किजिए। मेरे हृदय को श्री शुक देव जी और बहस्पति जी सवथा जानते ह । वशाख शक्ल दशमी भगवार के शुभ दिन म ब धओ के साथ आकर, मेरे ब ध बा धओ के साथ मेरा उद्धार कर मेरी क या का पाणि ग्रहण कीजिय । आपको अधिक क्या लिखना है । श्री शकदव जी जो कुछ कहते ह उसे सत्य कीजिय । इस प्रकार शभ—वर—पत्रिका लिखकर पुत्र मित्र एव बा धव के साथ आकाशराजा ने महात्मा शुकदेवजी को श्री जगदीश के पास भेजा ओर एक कोस उनके साथ जाकर राजा ने शकदेवजी से कहा कि किसी न किसी प्रकार से उनके चित्त को वश म किजिये जिससे कि वे इस विवाह का अगीकार करे।

श्री शुक जी मध्याह्न के समय वेकटाचल पर पहुच । उनको देखकर श्रीनिवास ने कहा कि मेरा काय सफल हुआ हे या नही । आपका काय सफल हुआ हे – इसमे स देह नही" – एसा कहकर श्री शक जी ने साष्टाग दण्डवत श्री हरि को प्रणाम किया । इस वाक्य को सुनकर श्रीनिवास न श्री शक देव को आलिगन करके पूछा 'कि कक्ष में रखकर क्या लाय?" श्री शकदेव जी बोले कि "हे पुरुषोत्तम! यह आकाशराजा की लिखी हुई शभपत्रिका हे ।' यह कहकर पत्रिका उन्हे समर्पित की । पत्रिका बाचकर श्रीनिवास प्रसन्न हुए और बोले कि इसका उत्तर लिखूगा । यह कहकर श्रीनिवास ने इन्द्र के मित्र आकाशराजा को स्वय इस प्रकार पत्र लिखा कि "राजाधिराज सुधम – पुत्र आकाशराजा को भक्तिपूवक नमस्कार करके श्रीनिवास से लिखा जाता है कि आपका लिखा हुआ पत्र देखकर मुझ अत्य त स तोष हुआ। आपकी इच्छा के अनुसार वशाख शुक्ल

दशमी भृगुवार के दिन मे आपकी कन्या को अंगीकार करूंगा । जिस प्रकार पूर्व काल में सागर ने मुझ को कन्या दान दे सुन्दर कीर्ति पायी उसी प्रकार अब आप भी मझको कन्या दान देकर बहुत कीर्ति वाले हो जायगे । आप विशेष जानने वाले है । अधिक क्या लिखना है ? यह मेरा प्रणाम पूर्वक विज्ञापन है ।" इस प्रकार शुभ पत्रिका लिखकर शेषाचल के स्वामी ने श्री शुकदेव – मुनि के द्वारा उसे राजाओं मे श्रेष्ठ आकाशराजा को भेजा । भगवान के दर्शन से आनन्दित श्री शुकदेव मुनिजी आकाशराजा के नगर में गये ।

२५ श्रीनिवास से वकुलादेवी का पद्मावती के परिणय का वृत्तान्त कहना ।

शुकदेव के चले जाने पर भक्तवत्सल भगवान श्रीनिवास ने वृद्ध एवं मार्ग श्रम से थकी हुई माता वकुला को देखा और उसे प्रणाम करके कहा कि "अम्ब ! आपको विलम्ब किस कारण से हुआ ? आकाशराजा के यहा क्या हुआ सो कहिये ।' वकुला बोली कि "बहुत यत्न से आपके लिये कन्या का प्रबन्ध हुआ है । दैवयोग से नारायणाश्रम से धर्मदेवी आयी जिसने राजमन्दिर में जाकर बताया कि वह कन्या आप ही के योग्य है वह कन्या भी आपके अतिरिक्त और किसी प्राकृत मनुष्य को नहीं चाहती ।' उनके वचन सुनकर राजा ने अपनी कन्या आप ही को देने का विचार किया है । उसने सभा मे प्रतिज्ञा की है कि "यह पुत्री श्रीवेंकटाचलवासी हरि को ही दूगा । इस प्रकार माता के वचन सुनकर श्रीनिवास बहुत प्रसन्न हुए । (भविष्योत्तरपुराण ६ अध्याय)

२६ श्रीनिवास की आज्ञा से ब्रह्मादि को लाने के लिये शेष और गरुड का जाना ।

वन्धु के सहित आकाशराजा के पास विवाह के लिये बन्धु–परिवार रहित होकर जाना उचित न समझकर श्रीनिवास ने चतुरानन तथा महेश्वरजी को सपरिवार बुला लाने के लिये शुभ पत्रिकाए देकर शेषजी और गरुडजी को भेजा । गरुडजी ने सत्यलोक में जाकर सूर्य के सदश ब्रह्मा को देखकर एवं भक्ति से प्रणाम करके पत्रिका दी । ब्रह्माजी ने पत्रिका खोल कर इस प्रकार पढी –– "चिरजीव पुत्र ब्रह्मा को श्रीवेंकटाचल के स्वामी श्रीनिवास के सब मंगल और वैदिक आशीर्वाद होवें । कलियुग में आकाशराजा मझको कन्यादान करेंगे । पत्रिका देखते ही पुत्र मित्र कलत्र सेना समेत तथा लोकपालो, गन्धर्वो और उरगो के साथ शीघ्र आ विवाह को देख सुख पूर्वक चले जाओ ।" ब्रह्माजी ने पत्रिका का अर्थ समझ कुछ ध्यान युक्त हो अतुल सन्तोष को प्राप्त किया और द्वारपालो को बुलाकर आज्ञा दी कि आज सभी ओर भेरी और दुंदुभी बजाओ जिनके शब्द से

यह विदित हो जाय कि आज भारतवर्ष में श्रीनिवास के कल्याण को देखने के लिये शेषाचल पर सब सेनाए, मेरे साथ सबलोग जाने को उद्यत हो जाय ।

२७ चतुरानन का शेषाचल पर आना ।

श्री चतुरानन वस्त्राभूषणो से विभूषित हो सरस्वती सावित्री एवं गायत्री के साथ चन्द्रमा के समान प्रकाशवाले हंस पर चढकर परिवार सहित शेषाचल को निकले । पहले चर आकर श्रीनिवास से बोले कि 'आपके पुत्र चतुर्मुख आ रहे हैं ।' श्रीनिवास पुत्र वात्सल्य के कारण गरुड पर बैठकर ब्रह्माजी के सामने गये । उनको आते हुए देखकर ब्रह्माजी हंस से उतरे और श्रीनिवास को दण्डवत साष्टाग प्रणाम किया । श्रीनिवास ने, उनको उठाकर पुत्र वात्सल्य के कारण आलिंगन किया । उन दोनो ने परस्पर कुशल क्षेम पूछकर कुछ समय बिताया । उस समय श्रीनिवास ने ब्रह्माजी से वह सारा वृत्तान्त जो द्वापर के अंत में हुआ इस प्रकार कह सुनाया – ' वैकुण्ठ में शेष शय्या पर शयन करते हुए मुझे महर्षि भृगु ने अपने चरण तल से वक्ष स्थल पर तुम्हारी माता के सामने ही मारा है । तब तुम्हारी माता कोल्हापुर (करवीर पुर) में चली गईं उस दुःख से संतप्त मैं उत्तम वैकुण्ठ को छोडकर इस श्रीवेंकटाचल पर आकर एक वल्मीक में विलीन हो ठहरा । इस प्रकार ठहरे हुए मुझको चोलराजा के भृत्य ने कुठार से मारा जो मुझे दूध पिलानेवाली गाय पर क्रुद्ध हुआ था और राजपत्नी से पीटा भी गया था । वकुलादेवी ने मेरी रक्षा की । फिर किसी समय मृगया में लगा हुआ मैं पद्मतीर्थ के समीप एक उपवन में गया जहा आकाशराजा की पुत्री पद्मावती को देखकर मैं अत्यंत मोहित हुआ । मैं ने वकुला से कहा कि पद्मावती के साथ मेरा विवाह सम्पन्न करो । उसने यह विवाह सम्बंध ठीक किया ।

२८ शेषाद्रि पर रुद्रादि का आगमन ।

इतने में पार्वती षण्मुख समेत नील कण्ठ शिवजी प्रमथ गणो के साथ वेंकटाद्रि पर पधारे । नीलकण्ठ महेश्वर ने श्रीनिवास तथा चतुरानन को प्रणाम किया । श्रीनिवास ने शंकर का आलिंगन कर श्रेष्ठ आसन पर बिठाया । इसके पश्चात कुबेर भार्या बंधु जनो तथा यक्षो के साथ आये । इस समय स्वाहा और स्वधा के साथ मेषवाहन अग्निदेव श्रीवेंकटाचल पर आये । इसके उपरान्त यम वरुण, इन्द्र, चन्द्र सूर्य आदि सब देवता एक एक करके आये । फिर पुत्र और परिवार के साथ कश्यप, अत्रि भरद्वाज वामदेव गौतम विश्वामित्र वसिष्ठ, वाल्मीक, परशुराम पुलस्त्य दधीचि शुनःशेप, गालव, गार्ग्य कृष्ण इत्यादि सब ऋषि क्रमशः वेंकटाद्रि पर आये । उन सबका उचित रीति से आदर सम्मान कर श्रीनिवास ने उन्हें योग्य आसनो पर उपविष्ट किया ।

२९ विश्वकर्मा से विवाहपुर – निर्माण ।

श्रीनिवास ने तब इ द्र को देखकर कहा कि विश्वकर्मा से कल्याण (विवाह) के योग्य नगर का निर्माण कराओ। इ द्र की आज्ञा का पालन कर विश्वकर्मा न पचास योजन लम्बा एव तीस योजन चोडा सु दर तथा सब प्रकार से बढिया नगर बनाया। पश्चात श्रीनिवास के आदेशानसार शचीपति न मय सहित विश्वकर्मा को आकाशराजा के नगर म भजा और वहा उनसे एक ऐसा नगर बनवाया जिसमें मोतिया की मालाओ से लकृत रत्नो से जटित स्तभवाली कल्याणवेदी, रत्नो के तोरण तथा गोपुर मण्डित भवना, सकडो वापियो एव कूपो तथा हाथी घोडो के लिये शालाओ का निर्माण भी हुआ।

३० श्रीनिवास का देवता ो और मुनियों को विवाह कार्य मे नियोजित करना ।

श्रीनिवास ने तब देवताओ को देखकर इस प्रकार कहा कि "आकाशराजा की पद्मावती नाम की जो कन्या हे उसका पाणि ग्रहण करन की म इच्छा करता हू। आप सबको यह बात स्वीकृत हुई तो म राजकन्या को स्वीकार करूगा।" वे वचन सुनकर ब्रह्मादि देवता इस प्रकार बोले – "हे पुरुषोत्तम! हम सब आपके सेवक ह। आपकी कृपा से यहा आपके कल्याण का महोत्सव देखन के लिये आय ह।' इस प्रकार उनकी सम्मति जानकर श्रीनिवास न देवताओ को विवाह काय में नियोजित किया। भगवान श्रीनिवास ने महा भाग वसिष्ठ को पुरोहिताई के पद पर नियक्त किया। देवताओ तथा ऋषियो द्वा सम्मान करन के लिये शकर को देवताओ को बुलान के लिय कुमार (कार्तिकय) को सबका स्वागत करन के लिय कामदेव को नियुक्त करके श्रीनिवास ने यज्ञमूर्ति हव्य वाहन को बलाकर कहा कि "आप पाक (रसोई) बनान का काय लीजिय। ऋषियो और देवताओ को आप ही का पाक पसन्द ह। इसलिय स्वधा और स्वाहा के साथ आप पाक करें'। फिर श्राहरि न जल देन के लिय वरुण को और सुगध द्रव्य देने के लिये वाय को नियोजित किया। उ होन दुष्टो को दण्ड देन का काम यम को, धन वस्त्र आदि देन का काय कुबेर को, दीप धारण काय निशाकर को, पात्रो को शद्ध करन का काम अष्ट वसुओ को सोप दिया। पुराण पुरुष से इस प्रकार आज्ञा मिलन पर वे सब देवता अपन अपने कार्यों में तत्पर होगय।

३१ विवाह के लिये करवीर पुर (कोल्हापुर) से लक्ष्मी को बुलाना ।

तब लोक पितामह ब्रह्मा श्रीनिवास के पास जाकर बोले कि "पुण्याहवाचन इष्ट देवता की पूजा और कुलदेवता की प्रतिष्ठा इत्यादि काय होने चाहिय इसलिये

आप मंगल स्नान कीजिए ।" तब ब्रह्माजी के वचन सुनकर श्रीनिवास ने करवीर, पुर में रहती हुई लक्ष्मी का स्मरण किया और दुःखी होकर लोकरीति से कहा — "रमा के बिना यह सभा शोभती नहीं । जिस प्रकार आकाश में चन्द्रमा के बिना तारागण शोभित नहीं होता उसी प्रकार मैं, आप और देवता हम सब उसके बिना (रमा के बिना) शोभित नहीं होते । प्रलय के समय जब मैं अकेला क्षीरसागर में वटपत्र पर शयन कर रहा था तब भी जिस लक्ष्मी ने मुझे नहीं छोडा उसके अभाव में मैं कैसे सुख का अनुभव कर सकता ? उसके बिना मैं कैसे विवाह कर सकता ? इस प्रकार जब श्रीनिवास विलाप करने लगे तब पितामह ने कहा कि "यदि ऐसा है तो आपने पहले ही क्यों नहीं कहा ? अब किसलिये प्राकृत की भान्ति विलाप करते हैं ? फिर भी, हम में से किसी को नियुक्त कीजिये जो लक्ष्मी देवी को लाये ।" तब श्रीनिवास ने सूर्य को बुलाया और कहा — "तुम करवीर-पुर में जाकर वहाँ से रमादेवी को मेरे यहाँ लाओ ।" यह सुनकर सूर्य ने विनीत होकर प्रश्न किया कि "उस संसार की माता को मैं आपके पास क्या कहकर लाऊँ ? और लक्ष्मी मुझ पर कैसे विश्वास करेंगी ? सो मुझसे कहिये । श्रीनिवास बोले — "मैं तुमको एक उपाय बताऊँगा । सुनो ; तुम लक्ष्मीदेवी से कहो कि तुम्हारे भर्ता ने तो आज पृथ्वीतल पर शयन किया है । वे आज अचेत होकर पडे हुए हैं, यह विदित नहीं है कि वे जीते हैं या नहीं । तुम्हारे पति जगन्नाथ आज हमको शक्तिहीन मालूम पड़ते हैं और 'उस देवी को कब देखूंगा' — यही प्रलाप करते रहते हैं । वह तुम्हारे ये वचन सुनकर आवेगी – इसमें संशय नहीं है ।" तब यह उपाय सुनकर सूर्य बोले कि "यह प्रसिद्ध है कि लक्ष्मीदेवी सब लोकों में सबको जाननेवाली है । वह हृदय की सब बातों को जानती हैं । वह मेरा क्यों विश्वास करेंगी ? और रोग के बिना आपको रोगी कैसे कहूँ ? " उसके इस सन्देह का निवारण करते हुए श्रीनिवास ने कहा कि "वह मेरी माया से अवश्य मोहित हो जायगी और तुम्हारे वचनों पर विश्वास करेगी, जाओ ।" यह कहकर श्रीनिवास ने सूर्य को भेजा ।

सूर्य के वचन सुनकर रमादेवी रथारूढ हो मारुत की गति से वेंकटाद्रि पर आयी । उनके आगमन का समाचार सुनकर उनके दर्शन के इच्छुक हो शक्तिहीन जैसे हरि उसी क्षण उनके सम्मुख गये । श्री शंकरजी की भुजा पर वाम - हस्त तथा दक्षिण - हस्त श्रीब्रह्माजी के गले में डालकर स्वयंभू श्रीहरि आये । इस दशा में श्रीनिवास को लक्ष्मीजी ने देखा और शीघ्र ही रथ से उतर कर उनके चरण-कमलों पर चम्पा पुष्पों के समूह की वर्षा कर अत्यन्त भक्ति से उन्हें आलिंगन किया । उनके आलिंगन से पुष्ट एवं स्वस्थ शरीर होकर श्रीनिवास ने उनका कुशल पूछा और उन्होंने भी श्रीहरि का कुशल पूछा । फिर लक्ष्मी बोली कि "आपकी

अलन्य माया मझ मोहित करती हे । आपकी माया मे ब्रह्मा, शिव इत्यादि देवता तक मोहित किये गय ह । फिर मेरी बात क्या हे ? हे वासुदेव ! आज मुझे ग्लान का कारण क्या हे ? आपकी क्या आज्ञा ह ? सो सुनाइय ।" श्रीनिवास इस प्रकार बाले – 'रामावतार म अपने कहे हुए वचन का स्मरण करो । वेदवती के विवाह का समय अब उपस्थित हुआ ह । इस कलियग मे तुम्हारे समक्ष ही उससे विवाह करना चाहता हू इसमें तुम्हारा उद्देश्य क्या है ? ' इस प्रकार गोविन्द के कहन पर लक्ष्मी न पहले की बात का स्मरण किया और कहा कि 'विधिपूवक विवाह करके उसे स्वीकार कीजिय ओर मेरे वचन को सफल कीजिय " इतना कहकर उसन श्रीनिवास का प्रणाम किया । उदार बुद्धि सम्पन्न श्रीहरि न एसा ही हो कहकर उसको आनन्दित किया ।

(भविष्योत्तरपुराण १० अध्याय)

३२ लक्ष्मीदेवी के द्वारा श्रीनिवास का मगल अभिषेक ।

इसके पश्चात श्रीनिवास न ब्रह्मा से कहा कि ' अब जो काय करन योग्य है शीघ्र कराइय । ' उस वचन को सुन स तुष्ट हो ब्रह्माजी ने गरुडादि देवताओ को स्नानाथ पात्र प्रस्तुत करन की आज्ञा दी । तब उन सबो ने वरुण वायदेव की सहायता से सुगध तथा शभ दि य तीर्थो के जल से भर कर पात्रो को प्रस्तुत किया । पावती सरस्वती सावित्री इत्यादि सुहागिन स्त्रिया अरुधती को आगे करक मगलगीत गान लगीं । जब उन सब स्त्रियो न श्रीनिवास से कहा कि स्नान करन के लिय रत्नो की पीढ पर बठिय तब दीन वदन वाले भगवान नेत्रो से आसू छोडते हुए बोले कि 'हे चतुरानन ! मेरे तो माता पिता नही हे न भाई हे और न बहिन ह ? बन्धु बाधव भी मेरे कोई नही ह । फिर कौन आशीर्वाद के क्रम से मेरा अभिषक करेगा ? जिसके ब धु नही ह उसके जन्म एव जीवन को धिक्कार है । इतना कहकर लीला के लिय ही शरीर धारण करन वाले हरि ब्रह्मा के मुख को देखते हुए लौकिक ढग से रोन लगे । हरि के वचन सुनकर ब्रह्मा उनको सान्त्वना देते हुए बोले कि "हे पुरुषोत्तम ! आप किसलिये हम लोगो को मोहते ह ? क्या आपका कुटम्ब हम सब नहीं ह ? आप साक्षात परम पुरुष ह । आपकी ही स्त्री ससार की माता ह । लोक ही जिसका कुटुम्ब हे एसे आप हम क्यो व्यथ ही मोहते ह ? इतना कहकर ब्रह्मा न लक्ष्मी को विष्ण भगवान का मगल स्नान कराने का सकेत किया । तब लक्ष्मी समीप आकर श्रीनिवास से बोली कि ' हे वकटाचलाधीश ! आपका हृदय अवगत हुआ । अपने दु ख को छोडिये और स्नान की पीढ पर बठिय । म तल ओर उबटन लगाकर आपका अभिषक करूगी । लक्ष्मी क ये वचन सुनकर श्रीनिवास सन्तुष्ट हुए और उन्होने वसिष्ठ – आदि मनिया से मगल स्नान करने के लिय अनुज्ञा मागी । ' एसा ही हो ' कहकर

उनके अनज्ञा देन पर सौभाग्यवती स्त्रियो न आकर श्रीनिवास को स्नान की पीठ पर बिठाया फिर सि धु - क या लक्ष्मीदेवी न ते ।से भरे हुए सोने के पात्र को लाकर अपन आशीर्वाद स उनका अभिन दन करके उबटन लगाया तथा सुगधित तेल शरीर पर लगाकर कपूर ओर केसर का लेपन किया । फिर कस्तूरी के साथ पिसे गय हरिद्रा के चूण से भगवान के शरीर को साफ किया । रत्न जटित सुवणमय घटो से लाय गय पवित्र तीथो के पावन जल से कमला ने जगदीश का अभिषक किया । अ त में चार सौ भाग्यवती स्त्रिया के द्वारा लाय गय शुद्ध जल स श्रीनिवास का अभिषक किया गया । सावित्री न उत्तम वस्त्र दिया और लक्ष्मी न उस वस्त्र से उनके स ग अगो का विधिपूवक पोछा । पावती न धप लेकर लक्ष्मी के कर कमल मे दिया और कमलादेवी न श्रीनिवास के केशो को सुगधित धूप से धूपित कर बाध दिया । रति और शची चामर डुलाती थी । सरस्वती देवी न भक्ति के साथ छत्र धारण किया और गगा न अपन पिता भगवान को खडाऊ दी । उन्हें चरणो पर धारण कर भगवान स्वय प वी पर पदल चलकर वर के आसन के पास आय । ब्रह्मा इत्यादि श्रेष्ठ देवता इ द्र इत्यादि लोकपाल कश्यप इत्यादि श्रेष्ठ मनि, वसिष्ठ इत्यादि तपस्वी, सनक इत्यादि योगी भगु इत्यादि श्रेष्ठ ऋषी अयमा इत्यादि पितर, तुम्बरु इत्यादि गायक रभा इत्यादि न तकी से सेवमान होते हुए स्वामी पुष्करिणा क दक्षिण तीर पर स्थित आसन पर पक्षि के वाहनवाले सुदर पुरुषोत्तम आसीन हो गय । तत्पश्चात सज्जनो के आश्रय श्रीनिवास न दपण म निजप्रतिबिम्ब देखकर अपन ललाट में ऊध्व पुण्ड धारण किया । इसके पश्चात कुबर से समर्पित आभूषणो से श्रीनिवास का लक्ष्मीदेवी न अलकृत किया । फिर सध्या की उपासना इत्यादि उस समय के सब कर्मा को समाप्त करके श्रीनिवास न कश्यप इत्यादि ऋषिया को प्रणाम किया । उ होन वसिष्ठ जी को आग का काय करन की आज्ञा दी । वासुदेव क वचन सुनकर वसिष्ठ जी ने वहा पर मोती से चौकोन वेदी बनाकर श्रीनिवास को उस पर बिठाया और विधिपूवक सकल्प ओर पुण्याह कम भी करवाया ।

३३ परिणयाग के रूप म कुलदेवता शमी वृक्ष का श्रीनिवास के द्वारा स्थापन ।

शास्त्र म कहे हुए कर्मा को विधि के साथ पूरा कर वसिष्ठ जी न हरि से कुल देवी को पूछा ओर भगवान न उनके वचन को सुनकर बताया कि मेरी कुलदेवी कल्याणी शमी है ओर यह प्रश्न किया कि वह कहाँ पर है ? जब अगस्त्य न कहा कि वह शमी कुमारधारा के पास है तब वहा जाकर उसकी पूजा करके श्रीनिवास उसकी एक छोटी शाखा तोड लाय । उन्होन पूछा कि

इसे कहा स्थापित करना चाहिय । नारदजी न कहा कि इस कुलदेवी शमी को वराह भगवान के घर में स्थापित किया जाय । तब श्रीनिवास न वराह स्वामी के पास जाकर उनकी आज्ञा लेकर उनके समीप शमी वक्ष की प्रतिष्ठा की थी ।

३४ परिणय के लिये कुबेर से श्रीनिवास का ऋण लेना ।

श्रीनिवास ने चतुमख से कहा कि नारायणपुर मे जाने के लिय सबको तयार कीजिय । उनके वचन सुन ब्रह्माजी बोले – मेरा यह विचार हे कि पुण्याह कम एव कुल देवता की स्थापना कर बिना भोजन किय नही चलना चाहिय । मुनि, बालक वद्ध इत्यादि सब भूख ह । वे सब भोजन की प्रतीक्षा कर रहे ह ।" यह सुन चक्रपाणी न इस प्रकार कहा कि 'म रिक्त हू । मेरा सारा द्रव्य चला गया । म कसे समाराधन करूगा ।' भगवान के वचन सुनकर लोक पितामह चप हो गय ! किन्तु शकर ने कहा कि विवाह करन तथा घर बनाने में प्रारभ से अन्त तक प्रयत्न को नही छोडना चाहिये । धन के अभाव म ऋण भी लेना पडे तो लेकर काय को समग्र सम्पन्न करन से कीर्ति लाभ होता है । शभु के इस वचन को सुनकर श्रीनिवास न इस प्रकार कहा कि "सभा म साहस कर ये वचन कसे बोले ? इस विवाह के लिय बहुत ऋण देनवाला आज कोन ह ? पुरुष यथाशक्ति केवल यत्न करता रहे, किन्तु कहे नहा । इस प्रकार शिव से कहकर पुरुषोत्तम कुबेर से बोले कि हे धनपति कुबर ! कुछ काम हे यहा आइय ।' इतना कहे जाने पर कुबेर सभा के बीच से उठ । ब्रह्मा कुबेर और शिव के साथ लक्ष्मीपति श्रीनिवास एकान्त में स्वामी तीथ के पश्चिम अश्वत्थ के पास जाकर कुबेर से बोले कि जितना धन चाहिय उतना धन देकर इस कलियग म मेरे कल्याण का साधन कीजिय । अपन अवतार के समय म घर से धन नहा लाता हू , पथ्वी पर जो धन है उसे अपन घर नही ले जाता हू । युग समय देश एव अवस्था के अनुसार अवतार धारण करता हू । इसलिये देश काल के अनुसार जितना चाहिये उतना ही धन मझको आप दीजिए । म यग के अनुसार ऋण चका दूगा ।" एसा कहे जाने पर कुबेर न भगवान से कहा कि धनहीन लोग धनवान को जिस प्रकार पत्र ससार में देते ह और उनसे धन लेते ह उसी प्रकार यदि आप पत्र (प्रमाण पत्र, वशीका) लिख द तो म आपको धन दू । ' इस प्रकार उनके वचन सुनकर हरि ब्रह्मा से बोले कि ऋण पत्र लिखिय । चतुमुख न इस प्रकार पत्र लिखकर प्रस्तुत किया कि "कलियग म विलम्ब नामक सवत्सर क वशाख शक्ल सप्तमी को रामराज्य के मुद्रा के चौदह लाख निष्क व्याज के साथ मल धन देन की इच्छा वाले श्रीनिवास न अपन कल्याण के निमित्त कुबर से ऋण में ग्रहण किये । विवाह के वष से लेकर हजार वष के अन्त म यह धन कुबर को चुकाया जायगा । प्रथम

साक्षी ब्रह्मा द्वितीया शिव और तृतीय अश्वत्थराज है।' इस प्रकार धनपत्र लिखकर कुबेर को दे श्रीनिवास ने ऋण रूप में धन ग्रहण किया।

५ वेंकटाद्रि पर आये हुए देवताओं को श्रीनिवास के द्वारा भोज दिया जाना।

श्रीनिवास ने जो धन ऋण रूप में लिया उसे कुबेर के हाथ में देकर कहा कि "हे धनेश्वर! सन्तर्पण के लिये आवश्यक चावल माष (उड़द) मद्ग (मूग) गेहूँ, गड, तल मध क्षीर शकरा दधि आदि पदार्थ वस्त्र उत्तरीय दुकूल पूगीफल, नागवल्ली के पत्र इलायची लवंग कपूर कस्तूरी का रस विवाह के लिये आवश्यक मांगलिक पात्र पर के अगूठा अगूठी इत्यादि और मेरे हाथो की अगूठियां आज शीघ्र बनवाइये। इस प्रकार गोविन्द के वचन सुनकर उन्होंने उन्हें क्षण भर में बनवा दिया। इस पर श्रीनिवास ने अग्नि को बलाने के लिये षण्मुख को भेजा। अग्नि देव के आ उपस्थित होने पर श्रीनिवास उनसे बोले कि 'स्वाहा के साथ क्षण भर में भोजन के अन्न और शाक इत्यादि का बनाओ। अग्निदेव अंजलि बद्ध हो बोले कि 'पाक के लिये एक भी भाजन (बरतन) नहीं है हे महाराज! बहुतों का पाक कैसे होगा?' उनके इस वचन को सुनकर शाङ्गधारी ने अग्नि से कहा कि 'आपके घर में कोई महोत्सव होने पर वट के बीज जैसे भाजन बढ़ते हैं परन्तु मेरे कल्याण के समय एक भी भाजन नहीं दिखलायी पड़ता। बिना भाजन के इन के पाक के लिये उपाय सुनिये। अन्न को स्वामी सरोवर में, सूप को पाप विनाशक आकाशगंगा के तीर्थ में गुड के साथ परमान्न को देवीतीर्थ में तुम्बरु तीर्थ में शाक और चटनी का विविध प्रकार के भोजन को कुमारधारिका तीर्थ में तिन्त्रिणी के उत्तम रस का पाण्डुतीर्थ में, और कंद मूल एवं फलों के साथ शेष व्यजनों को अन्य तीर्थों में लेह्य तथा पेय भी अन्यान्य तीर्थों में बनाओ। अग्निदेव ने उसी प्रकार पाक तैयार कर श्रीनिवास से निवेदन किया कि "श्रेष्ठ ब्राह्मणों, देवताओं और मुनियों का भोजन के लिये बुलाइये।" तुरत उन्होंने षण्मुख को उन्हें बुलाने के लिये भेजा। जब वे पाक के स्थान पर आये तब चतुर शिवजी ने उन सब आगतों को विधिवत छोटे बड़े के अनुसार पंक्ति बनवाकर पात्र परस दिया। पाण्डुतीर्थ से लेकर श्रीशैल तक वे ब्राह्मण एवं देवतागण अपने अपने पात्र के समीप पृथक बैठ गये। तब भगवान ने चारमुखवाले ब्रह्मा से कहा कि 'अहोबिल के नृसिंह की पूजा करके सब पदार्थ उन्हीं को निवेदन करने के उपरान्त भोजन करना चाहिये।' ब्रह्मा ने ऐसा ही कर सब से भोजन करवाया। फिर श्रीनिवास ने इस प्रकार उपचार पूर्वक कहते हुए सब से प्रार्थना की कि 'हे महाप्रभो! मुझको दरिद्र जानते हुए जलके साथ

मेरे थोडे से अन्न का बहुत मानकर कृपा पूवक सदा स्वीकार करे। वासुदेव के वचन सुनकर ब्राह्मणगण बोले कि 'आप का अन्न अमत के तुल्य एव भक्ति का साधक है। हम धन्य हुए तथा कृताथ भी हुए।" उन लोगो न हरि का इस प्रकार अभिनन्दन कर अत्यन्त सन्तुष्ट हाकर भोजन किया। भोजन के उपरान्त ब्राह्मणो को भगवान हरि न ताम्बूल और यथा योग्य दक्षिणा दी। सबके भोजन करने के पश्चात श्रीनिवास ने पुत्र, पौत्र भार्या सहित भोजन किया। सूर्यास्त हो जान पर सबन रात्रि म विश्राम किया।

३६ परिवार के साथ श्रीनिवास का आकाशराजा के नगर को जाना।

दूसरे दिन प्रभात होन पर श्रीनिवास न गरड को ब्रह्मा के पास भजा। गरुड ने ब्रह्मा से कहा कि आकाशराजा के नगर म जान के लिय सब तरह के प्रबन्ध कीजिये। ब्रह्मा न यात्रा के लिय चतुरग बल का प्रबन्ध करके श्रीनिवास के पास पहुच कर कहा कि "आयुध धारण किये हुए सब सेनाए सजा दी गई ह। हे पुरुष श्रेष्ठ! उठिय और गरुड पर चढकर चलिय।' इस प्रकार कहे जान पर श्रीनिवास गरुड पर अधिष्ठित होकर चले। आग ब्रह्मा जी, रुद्र दाहिन, बाय बाये और षण्मुख पीछ आ रहे थ। लक्ष्मीदेवी सोन के बन रथ पर बठकर आ रही थी। माता वकुलादेवी विमान में बठकर चली। इस सजधज के साथ जब श्रीनिवास निकले तब चन्द्रमा के समान प्रकाशवाले श्वेत छत्र को शष न धारण किया। चामर का वायुदेव हिलान लगे। विष्वक्सेन न विचित्र पख से माधव को हवा की। इस प्रकार भरी दुन्दुभी इत्यादि बाजाओ के बड शब्दो के साथ नाचन वाले नटो हाहा हूहू इत्यादि गायको से युक्त सब किसी की आत्मा श्रीनिवास सब ओर से विभव युक्त होकर विवाहाथ चले। वासुदेव के प्रस्थान के समय माग म देवताओ, ऋषियो गन्धर्वो तपस्वियो पशुओ की बडी भारी भीड हो गयी। शेषाचल से लेकर नारायणपुर तक जान के माग में तिल मात्र की जगह खाली नहीं दिखाई देती थी। भगवान की वह सेना पद्मतीथ के माग से आकाशराजा के नगर को जा रही थी।

३७ शुकदेव का श्रीनिवास को आतिथ्य दना

जब श्रीनिवास पद्मतीथ के समीप पहुचे तब श्रीशकदेव मनि न साष्टाग प्रणाम करके कहा कि "हे देव! इतन दिनो के पश्चात म अपनी की हुई तपस्या को सफल मानता हू क्योकि ब्रह्मा रुद्र इत्यादि को भी अज्ञेय तथा वेद से ही ज्ञेय आपको म आखो से अब प्रत्यक्ष देखता हू चूकि म पुत्र मित्र सब लोकपालो

शव और लक्ष्मी के साथ आपको अपनी भाग्यशाली आखो से देखता हू इसलिय मेरा आपके चरणो की पूजा करना सफल हे । कृपा करके मेरे द्वारा दिय गये कद मूल एव फल स्वीकार कीजिय । उस मुनि से इतना कहे जान पर श्रीनिवास ने कहा कि 'आप दुबले, विरागी एव ब्रह्मचारी हु ससार में लगे हम लोग यहा पर बहुत से हू । इसलिय आप हमारे लिय श्रम न कीजिय । आज ही उस महात्मा राजा की नगरी म जाकर भोजन करना चाहते ह । ' श्रीनिवास के ऐसा कहन पर यास के पुत्र शकदेव जी बोले कि "म अकिंचन हू इसमे सन्देह नही ह , लेकिन आपके भोजन करन मे ऐसा मान लिया जाता हे कि ससार न ही भोजन कर लिया इस मे विचार नहीं करना चाहिय । इसलिय मेरी प्राथना स्वीकार कीजिए । ' य वचन सुनकर वकुलादेवी बोली कि हे कृष्ण ! इनके वचनो को सुनिये । राजा को समझाते हुए इ होन आपके विवाह म बहुत ही यत्न किया है । " वकुलादेवी के वचन सुनकर श्रीनिवास न श्रीशकदेव मनि का आतिथ्य स्वीकार करके उनके कुटीर म प्रवेश किया और कुश से बन हुए सुन्दर आसन पर बठ गय । श्रीशकदेवजी न पद्मतीथ म स्नान कर भक्ति पूवक अन्न तरकारी और रस बनाया । पद्म के पत्रो का बिछा कर अपना बनाया हुआ अन्न आदि परोसकर उ होन श्रीनिवास को साष्टाग प्रणाम करके उनसे कहा कि हे गोवि द ! आप भोजन करके मझ कृताथ कीजिय । उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर श्रीनिवास ने ऋषिया के योग्य आहार ग्रहण किया । उनकी आज्ञा से माता वकुल के साथ लक्ष्मी ने मनि द्वारा दिय गय अमत के तुल्य अन्न को भोजन किया । लक्ष्मीदेवी के भोजन करन पर तपोधन ऋषिगण क्रोध से भरकर सुकदेवजी को डराते हुए श्रेष्ठ आसन से उठ गय । उनके मत का जानकर श्रीनिवास बाहर आय और सब की तप्ति के लिये डकारन लग । श्रीनिवास के मुख कमल स निकली हुई वायु से जसे तप्त हो मुनिगणो न स्तोत्र यक्त वचनो से शकदेवजी को शीघ्र ही सतुष्ट किया । श्रीनिवास वहा एक दिन ठहर कर दूसरे दिन प्रात काल होने पर पुन गरुड पर आरूढ होकर नारायणपुर को प्रस्थान कर चले ।

३८ परिवार क साथ आकाशराजा का श्रीनिवास के सम्मख आना ।

सूय के अस्ताचल पर चले जान पर आकाशराजा पद्मावती को स्नान कराकर, उसको अलकारो से सजाकर तथा हाथी पर चढाकर पुत्र पुरोहित एव भाई तोण्डमान के साथ श्रीनिवास का स्वागत करन के लिय चतुरग सेना समेत निकले । गरुडारूढ भगवान श्रीनिवास को देखकर सन्तुष्ट मन से वह राजा रथ से उतर कर अपनी पुत्री पद्मावती को सामन रखकर पुरोहित को अपन साथ

लेकर श्रीनिवास क निकट जा विनीत हो य वचन बाले कि 'म धन्य हू म कृ
होगया हू और म न स्वग माग को प्राप्त किया हे ।" एसा कहकर उन्होंने व
भरणो तथा गध तल स श्रीनिवास की पूजा की । पद्मावती एव श्रीनिवास ने
दूसरे को देखा । इसके पश्चात पद्मावती – श्रीनिवास को भजे हुए नगर
गलियो में वाद्य विशषो को बजाते हुए धमा फिराकर रत्ना से बने मन्दि
प्रवेश कराया । तब तक पाच घडी रात बीत चकी । उस समय श्रीनिवा
तोण्डमान को बुलाकर कहा कि 'वर पक्ष के म मेरे पुत्र मेरी माता वकु
मेरी पतिव्रता पत्नी लक्ष्मी, और मेरे साथ आये हुए सब क्षधा से पीडित
हमारे लिये अन्न ओर नाना प्रकार के भक्ष्य पदाथ शीघ्र बनवाइय और मनियो
पाक विशषता से यही पर अग्नि से बनवाना चाहिय । मझको भी पक्वान्न
भजना चाहिय । शीघ्र ही तोण्डमान अपना घर गया और पाक बनवाकर क्षुध
पीडित ऋषियो, मुनियो देवताओ और विप्रो को भोजन कराकर उन स
सन्तुष्ट किया । श्रीनिवास के लिये तो राजन्द्र न बहुत प्रकार के अन्न और
साथ भक्ष्य पदाथ भज ओर उस श्रेष्ठ राजा न स्वय आकर श्रीनिवास के भो
को प्रस्तुत किया । उनको अलौकिक वस्त्रादि दिया और श्रीनिवास की आज्ञ
राजा निज गह म गय । इसके पश्चात श्रीनिवास न परिवार के साथ रा
विश्राम किया ।

३९ विवाहार्थ श्रीनिवास को लाने के लिय आकाशराजा का उनके मन्दिर मे जाना ।

दूसरे दिन प्रभात होने पर उठकर श्रीनिवास ने स्नान करन क पश
वसिष्ठ से कहा कि 'परमप्रिया लक्ष्मी, पुरोहित, माता ब्रह्मा और म —
पाचो को आज भोजन नही करना चाहिय । राजा के घर म राजा, पति
राजमहिषी, कन्या, पुरोहित और भ्राता – इन पाचो को भोजन नही कर
चाहिये, एसा आप उन्हे बताइय ।' इस प्रकार वसिष्ठ जी से कहकर श्रीनिव
कुबेर से बोले कि "आप आकाशराजा के पास जाइय और उनसे इस प्रकार क
कि मुख्य ऋषियो का भोजन पूव ही बनवाना चाहिय क्योकि रात्रि मे तेरह ना
(दण्ड) महूत का समय है इसलिये ब्राह्मणो का भोजन असाध्य हे ।" कुबेर
जाकर आकाशराजा को यह समाचार सुनाया । आकाशराजा न रात्रि मे शीघ्र
ब्राह्मणो को भोजन कराकर दक्षिणा और ताम्बूल दिया ओर सबको सन्तुष्ट किय

भगवान के कल्याण दिवस दशमी शुक्रवार को सायकाल अपनी चतुरंगि
सेना आग रख, पुत्र वसुदान, सहोदर तोण्डमान, पुरोहित तथा आभरणो से अलं
एरावत नामक महानाग को साथ लिये हुए आकाशराजा श्रीनिवास को विवाह

त्त बलाने के लिय उनके घर आये। तब श्रीनिवास समस्त देवताओ की के बीच में बठ हुए थ। आय हुए राजा का देखकर श्रीनिवास उठ और गन करके बोले कि "आप सबसे श्रष्ठ और वद्ध ह। आप न हमारे घर का श्रम क्यो किया? बुलान के लिय अपने पुत्र वसुदान को नियक्त य।' श्रीनिवास के ऐसा कहते समय राजा पुरोहित से बोले कि 'अब ब किसलिये हो? श्रीनिवास वर की पूजा कीजिय।" वसिष्ठजी न राजा के सुनकर धरणी से कहा कि 'अरुन्धती का आगे करके श्रीनिवास की पूजा। उसने अपन को कृताथ मानकर चन्दन, कपूर, सुगध एव ताम्बूल से और प्रकार के वस्त्र तथा रत्नो के आभषण समर्पित कर देवताओ के देवता वास की पूजा की। इसके पश्चात आकाशराजा ने श्रीनिवास को हाथी पर। जो समस्त देवताओ ऋषियो के साथ चलकर सवमगल वाद्यो के शब्दो से रत्नो के तारणो से शोभित एव हजारो दीपो से प्रकाशित राजभवन में राजभवन के द्वार पर श्रीनिवास की आरती उतारन के लिय आयी हुई तोण्डमान की पत्नी न कुकुम और जल के पात्र को लेकर श्रीनिवास की की। उसके बाद श्रीनिवास ने राजमन्दिर में प्रवेश किया। राजा ने वास को अपन भवन में ले जाकर चार स्तभवाली रत्नो की सुवर्णवेदी पर । ब्रह्मा को आग करके उत्सव का देखन के कौतूहल स भर सब देवता ऋषी मनी श्रीनिवास को घर कर बठ गय।

४० पद्मावती श्रीनिवास का परिणय।

तब उस धर्मात्मा राजा न मगल स्नान किया और उस राजा की प्यारी ने भी सुगध तल के साथ स्नान करके अपने को अलकारो से सजा लिया। वास के चरणो का प्रक्षालन करने के लिये स्वामी पुष्करिणी के जल को घट में भरकर ब्राह्मण समेत वह ले आयी। तुरन्त पुरोहित न सकल्प कह दिया। पुरोहित के कहे हुए मत्र का उच्चारण करते हुए राजा न धरणी गिराये गय स्वामि तीथ के शभ जल से श्रीनिवास का पाद प्रक्षालन करके न के पवित्र चरणामत को सिर पर धारण किया और उन्होन अपन परिवार गा तथा भवनो इत्यादि पर उस जल को छिडक दिया। राजा न माना कि मेरा जन्म सफल हे जीवन भी साथक हुआ। श्रीनिवास के चरणोदक से तर भी आज प्रसन्न ह।

शुभमहूत के प्राप्त होन पर कन्या प्रदान के समय में आकाशराजा ने करोड श्रीनिवास को दहेज म दिय। इसके अतिरिक्त उस श्रेष्ठ राजा न सौ भार रीट उतन ही की कण्ठी, पुन उसके आध की कण्ठी, उसके आध की एक

ओर कण्ठा सात नियम पदक, मोतियो की एक माला भजा के उत्तम भूषण, मोतियो क बन काना के भूषण, रत्न माणिक्य वज्र वडूय से बने बत्तीस भार के अनपम ककण एक जोडा नागभषण (विजायठ) दस अगूठिया, वज्रखचित स्वणकटिसत्र तथा पादुका इत्यादि आभूषण श्रीनिवास को समर्पित किये। श्रीनिवास का साठ भार का भोजन पात्र दिया। उस श्रेष्ठ राजा ने जल के छोटे पात्र क सहित बड पात्र और चोसठ कम्बल दिये। इन सब के साथ भूषणो से शाभित भगवान श्रीनिवास का राजा न कन्यादान किया। "म कन्या देता हू, इसे ग्रहण कीजिय —" एसा कहकर राजा न धारणी मे गिरायी हुई मत्र से शुद्ध स्वामितीर्थ की धारा सुवणसहित श्रीनिवास के दाहिने हाथ मे गिरायी और पद्मावती को भी दिया। तत्पश्चात दोनो के हाथो में ककणो के बाधे जाने पर श्रीनिवास न मागलिक स्त्रिया के द्वारा मगलगीत गाय जाते समय ब्राह्मणो एव महात्मा राजा क कर स्पश से पवित्र एव मत्रो से अभिमन्त्रित मगल सूत्र पद्मावती के कण्ठ में बाध दिया। इसक बाद पुरोहित वसिष्ठजी न पद्मावती की अजलियो से समर्पित लावा का श्रीनिवास से अग्नि मे होम करवाया। इसके अनन्तर उन्होने शष ववाहिक विधि को यजर्वेद की शाखा क्रम से पूरा किया। तब राजा के पुरोहित न स्वस्ति वाचन पूवक मनियो की अजलि म नवरत्नो के अक्षत दिये। उन्होने उन अक्षता स वेदोक्त प्रकार से श्रीनिवास को आशार्वाद दिये। उस समय राजा न ब्राह्मणा को ताम्बल सहित भूरि दक्षिणा दी। विवाह के पश्चात पुरोहित, माता वकुला लक्ष्मी, और पुत्र के साथ श्रीनिवास न भोजन किया। धर्मात्मा आकाशराजा न भी अपनी पत्नी समत भोजन किया। दूसरे दिन प्रभात के समय सूमगली स्त्रिया न हास विनोद पूवक श्रीनिवास और पद्मावती से परस्पर एक दूसरे का मजन और उबटन करवाते हुए स्नान करवाया। आकाशराजा ने आनन्दित हाकर अपने घर आय सब ब्राह्मणो आदि को चार दिन तक खूब भोजन कराया। पाचवे दिन नागवल्ली कर रत्न। के सिहासन पर वर वधू को बिठाकर आकाशराजा न वस्त्रालकार देकर जामाता की पूजा की।

४१ श्रीनिवास का पद्मावती के साथ शेषाचल पर जाना।

विवाह के समाप्त हो चकने पर परिवार समेत आकाशराजा ने श्रीनिवास को पद्मावती सोपकर एरावत पर चढाकर उन्हे जनवास म भजा। तब गरुड के कध पर पद्मावती के साथ अधिष्ठित होकर श्रीनिवास स्वस्थान शेषाचल पर जान की इच्छा अपन श्वसुर आकाशराजा को बतान के लिये उनके भवन में गये। आकाशराजा न कहा कि वधू के साथ यहा एक महीने के अन्त तक रहकर जाइय। ' लेकिन श्रीनिवास न अपन काय की शीघ्रता बताकर तुरन्त जाने का

निश्चय किया। तब राजा न अपनी पत्नी धरणीदेवी के साथ पद्मावती श्रीनिवास को आशीर्वाद देकर स्वस्थान को भजा।

उनके पीछ आकाशराजा ने सपरिवार बहुत दायज ले जाकर श्रीनिवास को समर्पित किया। वह दायज इस प्रकार है—सो खारी धान, तीस खारी भूग अनेको भार गड, तितिणी (इमली) हजार घडो का दूध, सौ दही के भाण्ड घी से भरे हुए पाच सो पात्र, शक्करा से भरे हुए दो स. घड, बहुत सषप, हींग लवण, (बगन) कूष्माण्ड, कन्दमूलादि शाक दो सौ मध से भरे बतन, दस हजार घोड एक हजार हाथी, पाच सौ गाय एक सो अविका, (भडे) दो सौ दासिया तीन सौ दास, अनको वस्त्र रत्नो से सज हुए पलग इत्यादि।

इस दायज में अनेको वस्तुओ को लाय हुए परम भक्त धर्मात्मा आकाशराजा को देखकर जगदीश्वर श्रीनिवास इस प्रकार बोले कि हे राजा! रास्ते में इतनी दूर आप किसलिये आय ह? अपन पुत्र के द्वारा क्यो नही भज सकते? आपने मुझे जो कन्यादान किया उससे ही मुझे बहुत सन्तोष हुआ। आपक मन में क्या है सो मुझसे बिना किसी सन्देह क कहिय। श्रीनिवास के इस वचन को सुनकर आकाशराजा उनसे इस प्रकार बोले कि "आपके प्रसाद से हम लोगो को सब मगल प्राप्त ह। म दूसरा कुछ नहीं चाहता हू। सकुटम्ब मझको अपन चरण कमल की अचल भक्ति दीजिए।' यह सुनकर श्रीनिवास न उनको 'सायुज्य' दिया ओर अपन अग का वस्त्र शालक (वसुदान) को दिया। फिर राजा अपनी पुत्री को सान्त्वना देकर निज नगर में चल गये।

४२ अगस्त्याश्रम में श्रीनिवास का छ महीने तक रहने का निश्चय करना।

पद्मावती के पीछे पीछ चलते हुए श्रीनिवास ब्रह्मा, शिव इत्यादि के साथ सुवणमुखी नदी के प्रान्त को पहुचे। 'छ मास तक विवाह की दीक्षा के कारण पवत पर नही चढ सकता' — एसा निश्चय करके अगस्त्य के घर जाकर वहाँ श्रीनिवास रहने लगे। उन्होने ब्रह्मा इत्यादि देवताओ का यथायोग्य वस्त्र देकर अपने अपने घर जान की आज्ञा दी। उनकी आज्ञा पाय हुए देवतागण अपन अपने घर गये। तब श्रीमहालक्ष्मी करवार पुर में गई।

> महोत्सव त त्वनुभूय देवता ब्रह्मशपूर्वा समहर्षिसत्तमा।
> जग्म स्वक धाम महानुभावा राजेन्द्रपूज्य प्रशशसुरादरात ॥

अर्थात उस महोत्सव को देखकर ब्रह्मा इत्यादि देवता एव बडे बड ऋषिगण अपने अपने घर गय। वे महानभाव आकाशराजा से पूजित श्रीनिवास की प्रशसा आदर से करते थ। (भविष्योत्तरपुराण ११ अध्याय)

४३　आकाशराजा का निर्याण।

नेत्नाराज के चले जाने　बाद जब श्रीनिवास अगस्त्याश्रम में आकर रहने लगे तब एक दिन नारायणपुर से एक दूत श्रीनिवास के पास आया। उसने यह समाचार सुनाया कि आकाशराजा मरणासन्न है और वे अपनी पुत्री पद्मावती और दामाद श्रीनिवास को देखना चाहते है। यह समाचार पाकर श्रीनिवास शीघ्रता से वसुदान पद्मावती और अगस्त्यजी के साथ नारायणपुर गये। सूर्य के अस्त होने पर नगर में पहुंचकर श्रीनिवास ने राजभवन में प्रवेश किया और ऊंचे श्वास के साथ मात्र हो रहे राजा को देखा। अगस्त्य और श्रीनिवास के बहुत बुलाने पर भी जब आकाशराजा ने कुछ भी नहीं समझा तब श्रीवेंकटेश लौकिक मनुष्य की भांति विलाप करने लगे। श्रीनिवास के इस प्रकार रोते समय वह श्रेष्ठ आकाशराजा कुछ होश में आकर उनसे बोले कि 'हे श्रीनिवास! मेरे भाई और पुत्र की रक्षा कीजिए। ऐसा कहकर उन दोनों को श्रीनिवास के हाथों में सौंप दिया और स्वामी सहगमन करने के लिए भार्या को सन्देश दिया। यह आज्ञा देकर राजा प्राण छोड़ते ही स्वर्ग से आये हुए विमान पर चढ़कर सत्यलोक चले गये। वह धरणीदेवी भी उन्हीं के साथ शीघ्र चली गई। वसुदान ने उनके शरीरों का ब्रह्म मेध के मन्त्रों के साथ दहन संस्कार किया। प्रेतकार्य के समाप्त हो जाने पर पुराण पुरुष श्रीनिवास पद्मावती के साथ अगस्त्यजी के घर पर आ सुख से रहने लगे।

४४　राज्य के निमित्त से तोण्डमान तथा वसुदान में झगड़ा।

आकाशराजा के मर जाने और श्रीनिवास के चले जाने पर राजा तोण्डमान एवं वसुदान में राज्य के लिए झगड़ा उत्पन्न हो गया। तोण्डमान कहता था कि ज्येष्ठ के मर जाने पर परम्परा का उपार्जन किया हुआ राज्य कनिष्ठ का होता है। वसुदान का विचार यह है कि मेरे पिता के पराक्रम से उपार्जन किया हुआ राज्य मेरा ही है। अन्त में दोनों बलवानों ने यह निश्चय किया कि युद्ध में जिसकी जीत हो उसी का यह राज्य होगा जो नहीं जीतेगा वह चुप होकर चला जायगा। दोनों ने बड़ी बड़ी सेनाएं इकट्ठी की और दोनों सहायता की इच्छा से श्रीनिवास के पास आये और उनकी शरण में गये। दोनों प्रेम के पात्र हैं, किसकी सहायता की जाय — यह निश्चय न कर पाकर श्रीनिवास ने पद्मावती से पूछा कि हे कल्याणि! तुम्हारे भाई और कनिष्ठ पिता राज्य के लिए झगड़ा करके दोनों मेरी सहायता की इच्छा करते हैं। अब तुम विशद रूप से विचार करके कहो कि मैं किसकी सहायता करूं। पद्मावती ने इस प्रकार कहा कि 'हे नाथ! आप

सब धम जानते ह, क्यो कि आप ही सब धम के आधार हे , बडो का कहना यह है कि सदा धम ही करना चाहिय । वसुदान बालक हे, पितहीन मातहीन बिना धन का दुबल है उसी की रक्षा करना पुण्य है ' । पद्मावती के वचन सुनकर श्रीनिवास न अपन श्यालक वसुदान की सहायता करन का निश्चय किया और राजा तोण्डमान को अपना अलौकिक शख और चक्र दिया और उच्च श्रवा के समान घोड पर चढकर श्रीनिवास वसुदान के साथ गय । तोण्डमान ओर वसुदान में युद्ध आरभ हु ा । वह कुरु पाण्डव युद्ध की तरह प्रचण्ड रूप से हो रहा था । कुछ समय के बाद तोण्डमान के पुत्र ने श्रीनिवास पर चक्र से प्रहार किया । उसके आघात से श्रीनिवास प्राकृत मनष्य जसे मूर्च्छित होकर पथ्वी पर गिर पड । तब प्राकार (छत) पर चढी हुई श्रीनिवास की प्रिया पद्मावती न चक्रपाणी के गिर पडने की बात देखकर अगस्त्य से इस प्रकार कहा कि " हे मनीद्र ! रणरग म गिरे हुए श्रीनिवास को देखिय । यहा पर क्या करना चाहिये, सो मझसे कहिय । ' पद्मावती के वचन सुन अगस्त्यजी बोले कि ' युद्ध म सब क्षत्रिय अपना अपना काय दखते ह । इसलिय कोइ तुम्हारे पति को नहीं देखता । क्षत्रिय यद्ध म प्रवेश कर उत्साह ओर कोतुक से भरे रहते ह । वे सप्राण शरीरो को ही देखते ह निष्प्राण शरार को कोई नहा देखता । इसलिये तुम जाकर अपन पति को यद्ध से लौटा लो । स्त्रियो का परम धम पति भक्ति ही ह । वह तुम्हारा भाई ह और वे तुम्हारे कनिष्ठ पिता ह इनम से कोई भी विजयी हो – तुम्हारे लिय बराबर हे । अत तुम जाकर अपन पति की भलाई करो । मेरा मन तो सधि के उपाय की प्रशसा करता हे ।" मुनि की बाते सुनकर उसके साथ पद्मावती आदोलिका (डोली) पर चढकर रणभूमि को गई । शीतल जल तथा सुगधित हवा से पद्मावती ने श्रीनिवास को सचेत किया । तब श्रीनिवास निद्रा से जागे हुए के समान उठकर पद्मावती को देख झिडकते हुए भौहे टेढीकर मुनि से बोले कि "इस घोर रणभूमि मे स्त्रियो की क्या आवश्यकता हे । उससे कहो कि वह शीघ्र ही यहा से चली जाय । भगवान के वचन सुनकर अगस्त्य बोले कि हे प्रभ ! सधि करवाइये । कनिष्ट पिता और भ्राता म सधि का सधान करवान के उद्दश्य से पद्मावती यहा आई है । अगस्त्य के वचन सुनकर भी शान्त न होकर कोप से श्रीनिवास फिर बोले कि 'हे धीमान मनि ! सग्राम म स्त्रियो का आना ठीक नहा हे अब म तोण्डमान और उसके पुत्र का सहार करके वसुदान को राज्य दगा । श्रीनिवास के वचन सुनकर पद्मावती हाथो की अजलि बनाकर फिर इस प्रकार बोली कि 'हे प्राणनाथ ! दयासिंध ! दया कीजिये ! क्या लोक का नाश करना चाहते ह ? दोनो राज्य के योग्य ह । अत राज्य कोश बराबर बाट कर दोनो को दीजिये । आपकी कृपा से सब लोको का मगल हो ! रणभूमि मे लौटिय । प्रिया के वचन न मान कर श्रीनिवास फिर इस प्रकार बोले कि तुम क्षत्रियो का धम नही

जानती हो । अब म पुत्र सहित तोण्डमान का सग्राम मे वध करूगा और वसुदान को राज्य दगा । नही तो वसुदान के लिय यद्ध में म प्राण छोड दूगा ।" यह सुनकर पद्मावती कापती हुई अगस्त्य मनि से बोली कि हे मनिश्रष्ठ' आप श्रीनिवास को रण से लोटाइय ।' तब अगस्त्य ने उसकी प्राथना के अनुसार श्रीवेङ्कटश्वर से इस प्रकार कहा कि हे स्वामी' वसुदान और तोण्डमान को शात कर उनमे सधि कीजिय ओर राज्य तथा कोश बराबर बाट कर उनको दीजिये । अगस्त्य की प्राथना मानकर श्रीनिवास न तोण्डमान को बलाकर पूछा कि हे राजन ! तुम्हारे मन की इच्छा क्या हे ? एसा पूछन पर वह बोला कि "आप मेरी गति ह । आप जसा कहे वसा म मानूगा ।" इस के बाद वसुदान को बलाकर श्रीनिवास न कहा कि ' तुम्हारी कल्याणी भगिनी सधि करना चाहती हे । इसलिय मन म जो हो वह सत्य कहो ।" वासुदेव के वचन सुनकर वसुदान बोला कि ' हे गोविन्द ! म सदा सवदा आप के शासन म रहता हू , आप की जसी इच्छा हो वसा ही कीजिय । ' इस प्रकार उन दोनो से कहे जान पर श्रीवेकटश्वर न उन दोनो म सधि करवायी । राज्य, कोश दण्ड एव दुग बराबर बाटकर श्रीनिवास न दोनो को दिया और तोण्डमान से कहा कि आपके साथ युद्ध म प्राण छाडन के लिय उद्यत मझे तथा अपनी पुत्री को सोलहवा भाग देना उचित हे । उन्होम 'एसा ही हो' कहकर बत्तीस ग्राम श्रीनिवास को दिय । तब तोण्डमान को तोण्ड एव वसुदान को नारायण पुर के राज्यो पर प्रतिष्ठित कर श्रीनिवास उनक घर म एक एक दिन भोजन करके पद्मावती के साथ पुन अगस्त्य के आश्रम म चले आय । (भविष्योत्तर पुराण ६२ अध्याय)

४५. तोण्डमान द्वारा दिव्य विमान बनवाने के लिये श्रीनिवास की प्रेरणा

किसी समय श्रावेकन्श के दशन के लिय राजा तोण्डमान आया । श्रीनिवास न उस श्रष्ठ राजा को देख आलिगन करके कहा कि हे राजा ! आपके आन का कारण क्या है ? राजा न इस प्रकार कहा कि ' हे हरि ! आपके दशन से अधिक और कुछ नहीं हे । मनिजन और उत्तम मनुष्य गण आपको देवताओ के प्रभु वेदो से ही ज्ञय और पुरातन कहते ह । यह सुनकर आपकी सेवा करन के उद्दश्य से यहा म आया हू । ' श्रीनिवास न आकाशराजा का मत्य पर शोक करके इस प्रकार कहा कि "म आपके भाई आकाशराजा से गहस्थ बना दिया गया हू । किन्तु मेरे रहने के लिये कोई भवन नहीं हे । आकाशराजा का दामाद दूसरे के घर म है – यह अपयश मझसे सहा नही जाता । परतत्रता अत्यन्त दुखद है । इसलिये आप का मेरे लिय एक भवन बनवाना चाहिये । आपके अतिरिक्त और

तोनो लोको में एसी कीर्ति का स्थापन करन में समथ हे? श्रीनिवास की जानकर राजा तोण्डमान ने अवश्य भवन बनवाने का वचन दिया। स्थल के लिये शभलग्न एव नक्षत्र युक्त शुभ तिथि म श्रीनिवास राजा तोण्डमान प्रव – पत्नी पद्मावती के साथ शषाचल पर चढ। श्री वराहस्वामी की अनमति मिपुष्करिणी के दक्षिण तट पर आकर उन्होन राजा से कहा कि "उसी पर शुभ पूव मख का दो गोपुरवाला बडे बडे तीन प्राकार (छत) वाला, ष्ठ द्वारवाला श्रेष्ठ ध्वजस्तभ से शोभित और सब शुभ लक्षणो से युक्त बनवाना चाहिय, जिसमें अलौकिक सभा मण्डप अदभत यज्ञशाला ा धा यागार माला – गह वस्त्रालय, तलशाला घी केलिये पृथक गह लय, भूषणो का घर कपूर इत्यादि सुगध द्र यो का घर आदि रहे और ाप्रपत्र से अच्छीतरह मढ जाय और स्वण के अलकारो से शोभित बना दिया पहले आप श्रीतीथ एव भूतीथ बनवाकर यशस्वी हुए। अब शिला भवा य बनवाकर सुन्दर कीर्ति प्राप्त कीजिय।'

४६ तोण्डमान का पूर्वजन्म वृत्तान्त

श्रीनिवास के इस प्रकार कहने पर राजा तोण्डमान उससे बोले कि 'हे पया बताइये कि आप केलिये कूप मझसे किस जन्म मे कसे बनाया गया था, मेरी जाति क्या थी –।" राजा के इस प्रकार प्राथना करन पर स ने उनके पूवज म का वृत्तान्त इस प्रकार कहा कि 'पहले वखानस नाम ऋषि ने कृष्णावतार की कथा सुनकर कृष्ण का रूप प्रत्यक्ष देखने के वढ ो कठिन तपस्या की। उस तपस्या से प्रसन्न होकर उसके सामन भक्तवत्सल गोपाल का रूप धारण कर प्रकट हुए। उसने गोपाल रूप भगवान की ग्व वन्दना करके कहा कि म आपकी कृष्णरूप में पूजा करूगा। ने उससे कहा कि 'तुम्हे कृष्णरूपकी पूजा नहीं करनी चाहिय, तुम्हारी ा के योग्य श्रीनिवास रूप ही हे। तुम शषाचल को जाओ। वहा वल्मीक वास रहते ह। उस श्रीनिवास की पूजा करो। तुम्हें माग म श्रीरगदास एक शद्र मिलेगा। व तुम्हारी सहायता करेगा।' य बात सुनकर ऋषि श्रीवेंकटाचल पर आये। रास्ते म रगदास नाम के शूद्र से उसकी। उसीके साथ श्रीवेंकटाचल पर जाकर वल्मीक म छिपे हुए श्रीनिवास र ऋषि उनकी पूजा करन लगा। श्रीरगदास फूल तोड लाकर समर्पित ा। पुष्पवाटिका के सवधन के लिय रगदास न एक कुआ खदवाया। एक दिन कुण्डल नामक गधव अपनी स्त्रियो के साथ स्वामीपुष्करिणी म ए कर रहा था। रगदास उनको देखता रह गया और ठीक समय पर पूजा के लिय फूल नहीं ले जा सका। विलम्ब होने के कारण ऋषि ने

रंगदास पर कोप किया। रंगदास अपने किये अपराध के लिये पछता कर दुःख से चुप रहा। शंख चक्रधारी श्रीनिवास ने पश्चात्ताप से तप्त रंगदास को देखकर कहा कि हे रंगदास! मेरी माया से तुम मोहित हुए। तुम्हारे मन को पश्चात्ताप हुआ इसलिये इन सब पापों से छुडानेवाली स्वामिपुष्करिणी के तीर पर अपने अशान शूद्र शरीर को छोड दो। दूसरे जन्म में सुधर्म का पुत्र होकर तोण्डमान नाम से उत्पन्न होंगे। तोण्ड देश के स्वामी होकर तुम प्रसिद्ध होंगे। तुम मेरे भक्त भी होंगे। इसलिये तुम अभी अपना शरीर छोड दो।" ये बात सुनकर भगवान के कहे अनुसार उसने अपना शरीर त्याग दिया। वही रंगदास तुम आकाशराजा के छोटे भाई धार्मिक राजा हुए। तब तुमने पुष्पवाटिका के लिये कुआं खुदवाया और अब मेरे लिये मन्दिर बनवाकर कीर्ति लाभ करो।

४७ राजा तोण्डमान से निर्मित मन्दिर में श्रीनिवास का प्रवेश करना।

श्रीनिवास के वचनों को सुनकर राजा तोण्डमान ने अपने पूर्वजन्म में खुदवाये हुए कूप का जीर्णोद्धार किया और रत्नों से चित्रित बहुत ऊंचा चार श्रेष्ठ मूर्तियों से सुशोभित गरुड से विभूषित सुवर्ण के कलशों से संयुक्त विमान बनवाया और स्वामी के दर्शन तथा सेवा के लिये आने जानेवाले मनुष्यों के सौकर्य के निमित्त चढने उतरने का सोपान मार्ग जो एक योजन तक फैला हुआ था, बनवाया। मार्ग के बीच में लोगों के आराम के लिये मण्डप और प्यास बुझाने के लिये कुएं भी बनवाये। इन सब के प्रस्तुत होजाने पर श्रीनिवास के पास आकर राजा तोण्डमान बोले कि आपके निश्चय तथा आदेश के अनुसार सब कुछ सम्पूर्ण होगया। हे देव! आप अपने मन्दिर में आइये' उनकी प्रार्थना सुनकर श्रीनिवास बोले कि मैं तुम्हारी भक्ति से सन्तुष्ट हूं। अवश्य तुम्हारे पीछे मैं आऊंगा यह कहकर इन्द्रादि देवताओं ऋषिश्रेष्ठ वखानसों वेदपाठ करनेवाले ब्राह्मणों और मंगल शब्द करते हुए बाजाओं के साथ निकले हुए पुराण पुरुष श्रीनिवास और पद्मावती को राजा तोण्डमान ने धूम धाम के साथ उस श्रेष्ठ मन्दिर में प्रवेश कराया। तोण्डमान राजा के बनवाये हुए आनन्दधाम विमान में श्रीनिवास ने अपना निवास बना लिया। आनन्ददायक होने के कारण उस विमान का 'आनन्द–धाम' नाम हुआ।

'आनन्दनन्दनात्तमानन्दनिलयं विदुः।'

उत्तम कमलासन पर बैठी हुई पद्मावती को अपने वक्ष पर स्थिरता से रखकर शंख चक्र से विहीन होकर अपने कमर पर हाथ रखे हुए एक दाहिने

हाथ से देवताओ से आराध्य तथा मनष्यो की उत्तम शरण अपन चरण कमलो को दिखलाते हुए ओर कमर पर रख हुए हाथ से अपन चरण सेवको के लिय यह ससार सागर कमर पय त है – एसा दिखलाते हुए श्रीवकटश रमापति समस्त सम्पत्तियो से विराजमान हुए ।

कटि न्यस्तकरेणापि निजपादा जगामिनाम ।
नणा भवपयोराशि कटिदघ्न सप्रदशयन ।
विराजते वकटश सप्रत्यपि रमापति ।।
(भविष्योत्तर पुराण १३ अध्याय)

४८ ब्रह्मा का दीपारोपण और भगवदुत्सव करना

समस्त भूतो के अभ्यदय की इच्छा रखनवाले ब्रह्मा न जीवो के हित की कामना से दो दीप श्रीनिवास को समर्पित कर इस एक वर के लिय प्रार्थना की कि जब तक कलियग रहे तब तक य दीप प्रकाशित होते रह । जब विमान गिरे जब दीपो का नाश हो तब श्रीनिवास का अवतार भूलोक मे समाप्त हो । ब्रह्मा को यह वर देकर श्रीनिवास न उ ह यह आज्ञा दी कि ध्वजारोहण से लेकर रथारोहण से समाप्त होन वाला समस्त वाहन समेत मेरा उत्सव कीजिय । वेद के जाननवाले ब्राह्मणो से अनक प्रकार के बहुत विचित्र नवेद्यो से मेरा कल्याण कराइये । अपन पिता के य वचन मानकर ब्रह्मा राजा तोण्डमान को बलाकर उनसे बोले कि लक्ष्मीपति के लिय नाना प्रकार के वाहन और बहुत चित्रो से सजा हुआ लक्ष्मी का रथ शीघ्र बनवाइय । विश्वकर्मा से उक्त वाहन छत्र चामर शीघ्र बनवाना चाहिये ।" विश्वकर्मा ने भी ब्रह्मा की आज्ञा तथा राजा के आदेश के अनसार वाहन रथ आदि बनाय । उस समय श्रीनिवास न ब्रह्मा एव राजा से कहा कि ' सब देश के मनष्यो से भरा हुआ उत्सव उत्तम कहा जाता है । इसलिये सब देशो के राजाओ का उत्सव म आह्वान कीजिय ।' श्रीनिवास की आज्ञा पाकर राजा न सब देशो म नौकरो को भजा । राजा की इच्छा के अनुसार अग वग, कलिग, पौगड, काशी, काभोज, केरल, विराट, कुरु जागल बबर, पाण्डच, चेदि, मत्स्य सिन्ध इत्यादि देशो के राजा –– महाराजा कुटम्ब एव परिवार समेत आय । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वश्य शूद्र एव चाण्डाल ओर यवना को छोडकर अन्य जातियो के लोग आय । आय हुए सब भगवद्भक्तो न अपन धन, वस्त्र भूषण सजीव शरीर ओर सुख श्रीवेंकटश के चरण कमलो म अपण कर दिया । वहा आय हुए राजाओ और मनियो का यथायोग्य सम्मान कर सूय के कन्या रशि मे होन पर द्वितीया को जगत्पति श्रीनिवास का ध्वजारोहण अकुरापण आदि करके ब्रह्मा न वखानस मुनि श्रष्ठो से मन्त्रद्वारा पूजा करवायी और रत्नो

का बना हुआ नरयान सामन रखकर श्रीनिवास से कहा कि आप नरयान प चढकर चत्य की परिक्रमा कीजिय ।

४९ श्रीनिवास की आज्ञा से ब्रह्मा द्वारा भगवान की चार मूर्तियों का बनाया जाना

लेकिन श्रीनिवास न ब्रह्मा से कहा कि चतुर्वेदात्मक श्रीनिवास की चा मूर्तिया बनाइये । उनकी आज्ञा के अनुसार ब्रह्मा न क्षण मात्र में श्रीनिवास क चार शुभ मूर्तिया चारो वेदो के मन्त्रो प बनायी । उनके नाम इस प्रकार ह – पहला उत्सव श्रीनिवास दूसरा उग्र श्रीनिवास तीसरा सर्वाधिप श्रीनिवास औ चौथा लेखक श्रीनिवास * । इन चारो मूर्तियो की मूल मर्ति के रूप म साक्षा वेकटाधीश श्रीनिवास ही हुए । ब्रह्मा ने उन मूर्तियो के इष्ट देवताओ की भ कल्पना की । उत्सव – श्रीनिवास यात्रोत्सवो म दीक्षित हो कर रहे । छ प्रका के गुडान्न, तिलान्न परमान्न, मग का अन्न माष का अन्न दध्योदन से गुड वे अपूप तिल के अपूप, माष के अपूप, मनोहर मोदक आदि भक्ष्यो से सम्पन्न बहु प्रकार के चित्र विचित्र नवेद्य ब्रह्मोत्सव म बनाये जाकर भगवान को निवेदित किय गय ।

५० ब्रह्माजी के किये हुए महोत्मव का क्रम ।

ब्रह्मा जी न उत्सव श्रीनिवास का महोत्सव ध्वजारोहण के साथ यात्रापूवक कराया । ध्वजारोहण के पूवदिन सध्या के समय शष, गरुड ब्रह्मा इत्यादि देवताओ ऋषियो के साथ विष्वक्सेन समेत जाकर नगर के बाहर वल्मीक से मत्र – पूवक खोदी हुई पवित्र मिट्टी हाथी के मस्तक पर रखकर मगल के बाजाओ तथा परिकरो के साथ गलियो म प्रदक्षिण करके शीघ्र लायी गयी और अकुरापण किया गया । उसके दूसरे दिन ध्वजारोहण महोत्सव हुआ । आरम्भ से लेकर अवभथ तथा पुष्पयाग के अन्ततक श्रीनिवास के उत्सव को विधिपूवक ब्रह्माजी ने किया । श्रीनिवास के उस महोत्सव म ध्वजारोहण के दिन प्रथम मनष्यो की आन्दोलिका की सवारी रही । रात्रि मे दूसरी सवारी शष की रही । दूसरे दिन पुन प्रथम सवारी शष की ही रही और रात्रि में दूसरी सवारी हस की हुई । तीसरे दिन सिहवाहन प्रथम रहा और रात्रि मे मोती का मण्डप दूसरा वाहन हुआ । चौथे दिन प्रथम वाहन कल्पवक्ष और रात्रि मे दूसरा वाहन सवभूपाल हुआ । पाचवे

* उपयक्त चार मूर्तिया जो आज भी श्रीवेकटाचल म विद्यमान ह उनम वे श्री लेखक श्रीनिवास के सामन आज भी – अन्य उपचारो क साथ आय – व्यय का हिसाब सनाया जाता है ।

दिन मोहिनी रूप धारण किय हुए भगवान की पहली सवारी आन्दोलिका हुई, रात्रि में श्रीनिवास रूप मे स्थित भगवान का दूसरा वाहन साक्षात देव——मूर्ति गरुडका हुआ। छठे दिन भगवान का प्रथम वाहन हनमान हुए देवी के साथ वसन्तोत्सव में जाने के समय मगलगिरि द्वितीय वाहन हुआ और ततीय वाहन रात्रि मे एरावत हुआ। सातवे दिन प्रथम वाहन सूय का मण्डल हुआ सध्या के समय भगवान का दूसरा वाहन मगलगिरि हुआ और रात मे तीसरा वाहन चन्द्रमण्डल हुआ। आठवे दिन सबरे के समय नाना प्रकार के अलकारो से सुसज्जित रथ प्रथम वाहन हुआ और रात में दूसरा हय वाहन हुआ। नवे दिन प्रथम सवारी सबरे के समय पालकी हुई। मागलिक हरिद्रा के चूण से अभिषिक्त, अवभथस्नान एव मागलिक उत्सव म जाते समय मगलगिरि वाहन हुआ। मगलगिरिवाहन पर बठकर हरिद्रा के मगल चण से अभिषिक्त किय हुए भगवान श्रीनिवास ने चत्य की प्रदक्षिणा करवे वदिक मत्रो का पाठ होते समय स्वामि पुष्करिणी तीथ में अवतार के दिन श्रवण नक्षत्र म अवभथ स्नान किया। रात्रि में तीसरा वाहन मगलगिरि हुआ। तब भगवान का ध्वजारोहण नामक उत्सव सुसम्पन्न हुआ। तब दूसरे दिन पुष्पयाग * महोत्सव हुआ। उस समय अन्य देशो से आये हुए राजाओ की सपर्या (पूजासम्मान) की गई। भगवान के महोत्सव को देखकर देवता गण राजा लोग अपन अपन नगरो को चले गये। श्रीवेकटश को प्रणाम करके ब्रह्माजी अपने लोक को चले गय। उस उत्सव को समाप्त कर राजा तोण्डमान श्रीनिवास को प्रणाम करके उनकी आज्ञा लेकर निज नगर में जाकर अपने मन्दिर में श्रीवेकटेश की प्रतिष्ठा कर उनकी पूजा करते थ। सत्य से पथ्वी पालन करते थ। धर्मात्मा और शान्त होकर इन्द्रियो का जीतकर बिलमाग से जाते हुए वे नित्य श्रीनिवास की अचना करते थे।

५१ कूर्म नामक ब्राह्मण का वृत्तान्त

कार्तिक मास के आन पर सयोग से कूम नाम का एक ब्राह्मणश्रष्ठ अपनी स्त्री एव पुत्र के साथ अपने पिता की अस्थि लेकर गगास्नान की इच्छा मे यात्रा करते हुए रास्ते मे राजा तोण्डमान की चारो दिशाओ म फली हुई कीर्ति सुनकर राजदशन के निमित्त राज भवन में आया। इसने महालक्ष्मी नाम की अपनी स्त्री और राघव नामक अपने पुत्र को नगर के बाहर रखा और आप अकेला राजा के मन्दर में उपस्थित हुआ। विद्वानो की मण्डली में शोभित राजा तोण्डमान का देखकर उस वेद जानन वाले ब्राह्मण न वेदोक्त आशीर्वाद के साथ उनकी स्तुति करके इस प्रकार कहा कि 'हे राजा! आपकी कीर्ति सुनकर म आज आपके पास

* इस पुष्पयाग महोत्सव को वेकटाचल म अब पूलगी उत्सव कहते ह।

आया हू । मेरे पिता न प्रतत्व को प्राप्त किया हे । उनकी अस्थिया गगा म
मिलान की इच्छा से म काशी जा रहा हू । दवयोग से मेरी पतिव्रता पत्नी गर्भिण
होगई, मेरा पाँच वष का बालक स्वय चलन में असमथ है । यदि आप पुत्र औ
स्त्री की रक्षा करे तो म काशी जाकर गगा मे अस्थि -- निमज्जन कर लौट आ
समय अपने कुटुम्ब को ले जाऊ । राजा न ब्राह्मण की बात सुनकर अच्छा
कहा और उसे धन देकर काशी भजा । उसकी स्त्री और पुत्र दोनो उससे शीघ्र
लौट आने को कहकर राजा की पत्नी के यहा रहे । ब्राह्मण के चले जान प
उस श्रेष्ठ धर्मात्मा राजा ने एक भवन बनवाकर उस विप्रस्त्री को पुत्र के सा
उसमें रखा । चावल से लेकर लकडी तक सब सामग्रियो के साथ एक ही बार छ
मास के लिये पर्याप्त अन्न उन्ह दे दिया । उसके घर को जजीर से बाध कर आ
कोस की दूरी तक नौकरो को रखकर राजा इस प्रकार रक्षा का प्रबन्ध कराय
जिससे कि धूत उसम प्रवेश नही कर सकें । इस प्रकार विप्र की स्त्री एव पुत्र व
सुरक्षित रखकर राजा अपन राजकाज म लग गय । काय भार के कारण उनव
फिर कभी उस ब्राह्मणी का स्मरण करन का अवकाश नही मिला । वह ब्राह्म
गगा स्नान करके गया जा पहुचा । वहा अपन पिता का गया – श्राद्ध कर अप
कधो पर पवित्र गगा जल को लेकर दो वर्षा के बाद ब्राह्मण न राजा तोण्डमान
नगर म आकर राज भवन म प्रवेश किया । वह आशीर्वादो से अभिनन्दन क
राजा से बोला कि 'म आपके अनुग्रह से गगा स्नान और गया श्राद्ध कर आया
म गगा जल लाया हू । उसम स्नान कर आप पवित्र हो जाइय । " ऐसा कहे जा
पर राजा को उस ब्राह्मण की स्त्री का स्मरण हुआ । उस ब्राह्मणी की क्या द
हुई – इस बात की चिता से राजा निश्चेष्ट हुए । कुछ समय के बाद मन म ध
धारण कर राजा सुस्थिर हए । राजा की अवस्था देख दु खी होकर ब्राह्मण
उस श्रेष्ठ राजा से कुशल पूछा ओर राजा के स्वस्थ होन पर ब्राह्मण न कहा !
"अपनी गर्भिणी स्त्री को मन यहा छोडा था । क्या उसन प्रसव किया हे
उसका कुछ भी समाचार विदित न होन के कारण मझ चिन्ता होती है । मे
पुत्र नदी तडाग, पुष्करिणी के जल म खेलन मे आसक्त रहता हे । क्या वह कुश
पूवक हे ? मेरी पत्नी मुझे देखने के लिय अभी तक नही आयी । मझ भय हो
है । दिन रात उन्हीं को म याद करता हू । वे कहा ह ? " उसके वचन सुनव
राजा तोण्डमान ने धय धारण करके इस प्रकार कहा कि हे द्विजोत्तम ! ज
भय मत कीजिये । आपका पुत्र कुशल से है । आपकी पत्नी ने सुख से प्रस
किया है और पुत्री को जन्म दिया है । इसके पहले म न बहुत स्त्रियो को देखा
कि तु आपकी स्त्री नहीं देख पडी । अब उसके सब वृत्तान्त को सुनिये । व
शुक्रवार था । उस दिन श्रीवकटश का अभिषक हो रहा था । उसके दशन
लिय मेरी सब कन्याये गयी । उन्ही के साथ आपकी स्त्री भी पुत्री और पुत्र

साथ श्रीवेकटाचल पर गई। आज या कल वा परसो वह आपके पास आ जायगी। इस प्रकार राजा उस ब्राह्मण को सान्त्वना देकर गप्त रूप से अपन पुत्र से बोले कि 'हे पुत्र! तुम उस ब्राह्मण की स्त्री के भवन में जाओ। उस शृखला को तोड दो और भीतर घर मे प्रवेश करके उस ब्राह्मणी को पुत्र के साथ शीघ्र ले आओ। उस राजकुमार ने बहुत तेजी से जाकर पिता के कहे अनसार करके देखा तो वहा केवल अस्थि मात्र देख पडा। इस विपत्ति से राजकुमार यह सोचता हुआ कि 'अवश्य ही मेरे वश का मूल नष्ट होगा"—पिता के पास आकर बोला कि "हे तात! हमारे राजवश के नाश का समय आ गया क्योकि वह पूण गभ वाली ब्राह्मणी पुत्र के साथ अन्न इत्यादि के अभाव से मर कर अपने घर में अस्थि हो गई है।" एसा कहे जाने पर उस राजा ने धय धारण कर पाक के लिये विप्रोत्तम को चावल इत्यादि दिया। उस ब्राह्मण के स्नानाथ चले जाने पर राजा अपने पुत्र के साथ शषाचल के स्वामी श्रीनिवास की शरण में जाकर चरणो म प्रणाम कर रोने लगे। रोते हुए उन राजा को देखकर श्रीनिवास बोले कि 'हे नपोत्तम! इस समय आप किसलिय आये? आप रोते क्यो ह? आपकी धीरता और धनुष धारण करना ससार में प्रसिद्ध है। आज आपके रोने का क्या कारण है, सो मुझसे कहिए।" श्रीनिवास के इस प्रकार कहने पर राजा कुछ नहीं बोले तब उनके हृदय की सब बातो को जानकर भगवान पुन बोले कि "हे राजा! आपके आतुर हृदय का म ने जान लिया है। आप से किया गया यह पाप मझसे ही किया गया है। आप लौट जाइय, म क्या करू। आप से यह अयोग्य क्रूर कम किया गया है म पापी हू, दुराचारी हू, सदा दु खी हू। हाय! म या तो अकाल ही में काल को प्राप्त हूगा। अथवा कठिन नरक को। 'अपने दुष्ट भक्त की दुर्भाग्यता और दरिद्रता म ले लेता हू"—ऐसा धम के जानने वाले कहते ह। मेरे प्रति अपन भक्ति भाव में आपन कोई लोप नही किया। म क्या करू! आपन घोर पाप किया है। फिर भी आपकी मित्रता से उन मरे हुए जीवो को म जिला ऊगा।" कलियुग में इस महा पापी राजा की भक्ति श्रीवकटश ने की— 'एसी कीर्ति होगी। हे राजा! उन मरे हुए जीवो की सब अस्थियो को लाने के लिये शाप से डरे हुए अपने पुत्र को इसी समय भजिये।" श्रीनिवास के वचन सुनकर उस आतुर राजा ने उन मतको की हड्डिया लान के लिय अपने पुत्र को भजा। वह भी मतको के घर हड्डिया लाने के लिये वेग से गया। तब अस्थिसमह को बाधकर, कपडे से ढककर मनुष्यो की सवारी पर अच्छी तरह ढककर वह राजपुत्र शषाचल पर पहुचा और पिता से यह वचन बोला कि 'हे तात! उस अस्थि समूह को ले आया हू। शान्त श्रीनिवास भगवान से अस्थिसमूह का लाया जाना कहिय। पुत्र के वचन को सुनकर राजा श्रीनिवास से बोले कि 'हे हरि! मतको की हड्डियो को मेरा पुत्र ले आया है।' और राजा ने भगवान से प्राथना की कि

'इन मरे हुए ब्राह्मणो को पुनर्जीवित कीजिये।" इस प्रकार कहे जाने पर श्रीनिवास न उस अस्थि–समदाय को अपन उत्तरीय (चादर) में बाध लिया और जहा पर स्वामि पुष्करिणी हे उसके पूर्वदिशा में स्थित पाण्डतीथ के पास आकर उसके तीर पर देवताओ का एक कुआ पाया और तोण्डमान तथा उनके पुत्र को छोड कर कण्ठ पय त जल म स्नान किया। तीथ के समीप ही शिला पर अस्थियो को रखकर श्रीनिवास भगवान ने अपना अजली म भरे हुए जल से उसको धोकर स्पश किया और उसी क्षण मे उस अस्थिसमह म जीवन का सचार हुआ और श्रीनिवास भगवान के हाथ के स्पश के प्रभाव से वे (ब्राह्मणी और बच्चे, जी उठ। इन्द्रादि देवताओ न उस तीथ पर फूलो की वर्षा की और सभी उस तीथ के प्रभाव को देखकर विस्मय यक्त होगय। उस तीथ के प्रभाव से अस्थि रूप में रहनवालो के सजीव होन से वह अस्थितीथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। 'नरक मे रहनेवालो की हड्डिया भी इस तीथ में निमज्जित की जाय तो वे स्वग म जायगे'—इस प्रकार का वर देवताओ ने दिया। इस प्रकार भगवान श्रीनिवास ने पुत्रो समेत ब्राह्मणी को जिलाकर उस मख राजा को सोप दिया और कहा कि आपके किये हुए उपकार का सौगना प्रत्यपकार म न आज किया हे। यह उपकार म ने आपके बड भाई के प्रेम से प्रसन्न होकर किया है। इसके पश्चात म कलियुग में मोन धारण करूगा अकेला होकर अत्यन्त एकातिक जन को छोड और किसी से नही बोलूगा। इस कलियग मे दूसरे के मुख से हो बोलूगा, साक्षात बातचीत नही करूगा। आप अब अपन नगर को जाइय और उस ब्राह्मण को उसकी स्त्री और पुत्र को समर्पित कर आप अकटक राज्य कीजिये।" इस प्रकार श्रीनिवास भगवान के आज्ञा देन पर राजा ने अपन नगर म जाकर उस कूम नामक ब्राह्मण को उसकी स्त्री एव पुत्रो को समर्पित किया और वह सब वत्तात भी कह सुनाया जो हो चुका था। तब उस ब्राह्मण न राजा के सामने ही अपनी पत्नी से पूछा कि 'तुम इतन दिन कहा गई थी।" उसन इस प्रकार कहा कि 'हे स्वामी! भगवान की माया का क्या कहू! श्रीनिवास के उदर मे म न विचित्र ही लाक का विस्तार देखा है। मन ब्रह्मा आदि देवताओ को देखा हे। लोक और अलोक को म ने देखा। सात समद्रो, गहा, पवत वन वक्ष आदि को भी देखा है।' वे बात सुनकर लज्जित हो ब्राह्मण न यो कहा कि मेरे जन्म और घोर तपस्या को धिक्कार हे ओर वेद के अध्ययन को भी धिक्कार है। श्रीनारायण के उदर मे तुमन उन सब विचित्रो को देखा हे जिन्ह शिव आदि देवता भी नही देख सकते। तुम्ही धन्य हो। राजा तोण्डमान को भी बडा आश्चय हुआ कि इस ब्राह्मणी न पूव म कौन पुण्य किया है कि उसन श्रीनिवास के उदर में सब अदभतो को देखा। उस कूम नाम के ब्राह्मण न राजा तोण्डमान की अदभत शक्ति की स्तुति की और अपनी पत्नी तथा पुत्रो को साथ लेकर निज ग्राम म सन्तोष पूवक चला गया।

५२ राजा तोण्डमान का श्रीनिवास की सहस्र नामों से अर्चना करना ।

उस ब्राह्मण के सपरिवार चले जाने पर राजा तोण्डमान न श्रीनिवास भगवान के प्रभाव का स्मरण करके विस्मित होकर सोचा कि श्रीनिवास का मझपर आग्रह हो गया । उनके अनग्रह का सम्पादन करने के लिय क्या करना चाहिये ? इस तरह सोचते हुए राजा ने अगिरस आदि ऋषियों से इसका उपाय पूछा । राजा के वचन सुनकर अगिरस न इस प्रकार कहा कि 'हे राजा ! श्रीनिवास की कृपा की सिद्धि के लिये सहस्रनामो तथा हजार तुलसी के दलो से उनकी अचना करो । तुलसा उनकी प्रीति की वस्तु है । इस प्रकार तुम उनकी पूजा करोग तो श्रीवेकटश भगवान तुम्हे प्रत्यक्ष होग ।' अगिरस के कहे अनुसार राजा ने सुवण से बन हुए हजार तुलसी दलो को क्रमसे श्रीवेकटश के सहस्र नामानसार उनके चरणो में अपण करते हुए तीन मास तक उनकी पूजा की ।

इस प्रकार राजा के पूजा करने पर भी श्रीनिवास न उस पर अपने कोप का त्याग नही किया । तब वह राजा सवज्ञ भगवान से खिन्न होकर इस प्रकार वचन बोले कि 'अधिक गण वाले आप जसे पुरुष भक्ता के अपराधो की गणना नही करते । हे पुरुषोत्तम ! मझ भक्त की दुष्टता को आप क्षमा कीजिय । वर देने में आप सबसे श्रेष्ठ मान जाते ह । हे दयासागर ! मुझ भक्त के ऊपर दया दिखाइय ।" तोण्डमान राजा के इस प्रकार प्राथना करने पर श्रीवेकटश्वर आकाशभाषण मे इस प्रकार बोले कि 'पथ्वी पर मेरे भक्त बहुत ह, कि तु तुम्हारे समान कोई नहीं । ब्राह्मण की स्त्री और पुत्रो का घात रूप घोर पाप करके तुम पाप से तथा दु ख से किस प्रकार पार पाओग ? तुम्हारे बड भाई के उपकार ही के कारण मन उनको जिला दिया है ।" इस प्रकार की आकाशवाणी को सुनकर राजा मोह के वशीभूत हो श्रीनिवास से बोले कि हे हरी ! उपकार करने वाले पुरुष अपन किय हुए उपकार को नहीं कहते । मूख होकर भी कौन अपनी की हुई सेवा को कहता है ? मेरे समान आपका भक्त तीनो लोको मे नही है । आप में ही सदा लगा हुआ मेरे अतिरिक्त दूसरा कौन है ? म भक्तो म अग्र हू तथा दया करने वालो म आप अग्र ह । राजा की ऐसी गर्वोक्तिया सुनकर श्रीनिवास मौन रह गये ।

राजा तोण्डमान न पुन अत्य त भक्ति से सुवण के तुलसी दलो से श्रीनिवास की पूजा की ।

इस प्रकार अचना करते हुए राजा तोण्डमान ने एक दिन सुवण के तुलसी दलो पर मिट्टी से लिपटे हुए कृष्ण तुलसी के फूलो का समूह देखा । तत्पश्चात

किसी दूसरे दिन राजा ने देखा कि सुवर्ण की तु सी कुसुमावली दूर हटाई हुई है और मिट्टी से लिपटी तथा भीगी हुई तुलसी श्रीहरि के चरणों पर लगी हुई है। यह देखकर ही श्रीनिवास का अपने ऊपर क्रोध रहा समझकर राजा बहुत दु:खी होकर रोते हुए कण्ठ से बोले कि हे भगवान! क्रूर तथा पापी मुझ अनाथ की आप किसलिये उपेक्षा करते हैं? किस श्रेष्ठ भक्त द्वारा समर्पित मिट्टी से लिपटी तुलसी को आप प्रीति पूर्वक स्वीकार करते हैं?' इस प्रकार प्रार्थित होकर श्रीनिवास भगवान ने तोण्डमान से कहा—

५३ भीम नामक कुलाल का वृत्तान्त।

'मेरे अनेक भक्त हैं। उनमें भीम नाम का एक दरिद्र कुलाल यहाँ से उत्तर दिशा में एक योजन दूर पर है। वह शूद्र कुलाल अपने कृत्य को समाप्त करके स्वस्थ्य और शान्त होकर विधिपूर्वक स्नान कर अत्यन्त भक्ति से मिट्टी से लिपटी तुलसी से प्रति दिन मेरी पूजा करता है। उसकी भक्ति से सन्तुष्ट होकर मैं उसकी पूजा स्वीकार करता हूँ। हे राजन! तुम जाकर उस भक्त कुलाल और उसकी स्त्री को देखकर समझ लो कि मेरे अनेक प्रकार के विरागी भक्त हैं और यह भी जान लो कि एक मैं ही भक्त हूँ' – ऐसे तुम्हारे वचन अहंकार से पूर्ण हैं। उनके वचन सुनकर राज – गौरव को छोड़ हुए वह राजा शीघ्र ही चैत्य को छोड़कर कुलाल के घर जाने के मार्ग पर पैदल ही चले। मार्ग में पथिकों से कुलाल के घर का पता पूछते हुए राजा उसके निवास पर पहुँचे। घर की ड्योढ़ी पर जाते ही राजा अचेत होकर गिर पड़े। यह समाचार सुनकर कुलाल दौड़ता हुआ आया और कहने लगा कि हाय! यह बड़ा भारी कष्ट क्या है? यह राजा तो गिरा है, न जाने इसमें मेरा क्या अपराध है। मैं इस राजा की आज्ञा के अनुसार ही चलता हूँ।" इस प्रकार जब कुलाल विलाप कर रहा था तब राजा सचेत होकर दैन्य भाव से बोले कि 'कृष्ण भगवान को प्रसन्न करने वाला भक्त भीम नामक कुलाल कौन है? वह कहाँ है? मैं उसके साधु सम्मत चरणयुगल को सदा प्रणाम करता हूँ। राजा के इस प्रकार कहते ही भक्तवत्सल भगवान महात्मा कुलाल के सम्मुख प्रकट हुए। प्रकट हुए भगवान को देखकर आनन्द से परिपूर्ण कुलाल भक्तिपूर्वक अनेक प्रकार से उनकी (श्रीनिवास भगवान की) स्तुति करने लगा। शीघ्र ही भगवान ने उस कुलाल को अपने पास ले आने की आज्ञा गरुड को दी। भगवान के ऐसा कहने पर कुलाल ने देव देव को प्रणाम करके इस प्रकार कहा कि हे परमात्मा! मुझ कुलाल जाति के घर में आपका आगमन किसलिये हुआ? मैं तो विदुर, विभीषण शबरी और गजेन्द्र के समान ज्ञानी नहीं हूँ। आपको समर्पित करने के योग्य मेरे घर में क्या है?" इस प्रकार उसके कहने पर उसकी स्त्री तमालिनी इस तरह बोली कि 'हे गोविन्द! मेरी

द्धि आप ही म है । म न तो मत्रो को जानती हू और न तो सत्कम करती हूँ । छूत कुल म उत्पन्न हम को वेद कहा और तप कहा हे ? मेरी और विशष कर रे पति की भक्ति से प्रसन्न होकर मेरे पकाय हुए अन्न को जितना चाहिये उतना भर आदरपूवक खाइये ।

इस प्रकार भक्ति यक्त होकर कहे हुए उसके वचन सुनकर भगवान प्रसन्न उससे बोले कि "हे तमालिनी' भक्ति से दिय गय तुम्हारे अन्न को म अवश्य जन करूगा । ' भक्तवत्सल भगवान ने इस प्रकार कहकर रमा सहित कुलाल पति से दिये हुए अन्न को भाजन किया और उनको अपना परम धाम दिया यह कर सब देवताओ न श्रीनिवास की स्तुति की । देव गणो ने दुदुभी बजा कर ो की वर्षा की । इतने में स्वग से एक उत्तम विमान आया । उस विमान को या हुआ देखकर श्रीनिवास ने उस महात्मा कुलाल को अपना किरीट, शख, क्र, कौस्तुभ, पीताम्बर और अलकार दिये और लक्ष्मी के आभषण तमालिनी दिय । इस प्रकार श्री महाविष्णु से दिये हुए विभव वाले कुलाल – दम्पति र्गीय विमान पर चढकर राजा तोण्डमान के देखते देखते विष्ण के भवन वकुण्ठ चले गय ।

५४ श्रीनिवास का राजा तोण्डमान को मोक्षा देना ।

इस प्रकार वकुण्ठ को प्राप्त कुलाल—दम्पति का देखकर तोण्डमान लज्जित कर श्रीनिवास से बोले कि ' हे देव ! मेरे राज्य में रहनवाले, सदा पाप करने ले शद्र कुलाल को आपन उत्तम गति दी अपन बन्ध मझ को आप क्या गति हे ?" इस प्रकार राजा के पूछन पर श्रीनिवास न उत्तर दिया कि "इस को छोड कर दूसरा शरीर धारण करो । तब मेरी आराधना करके उत्तम ुण्ठ को प्राप्त करो ।" श्रीनिवास के इस प्रकार कहने पर राजा ने साक्षात मि पुष्करिणी में स्नान कर तथा शरीर को छोडकर पुन दूसरा शरीर धारण या । श्रीनिवास की आराधना करके उनके द्वारा पूव में कहे अनुसार राजा ण्डमान ने सारूप्य को प्राप्त किया ।

एव हरिस्तत्र चरित्रमदभत कुवञ्जगन्मातसमावितो गिरो ।
आस्ते जगत्या च सुरौघपूजितो ददत्यथष्ट च मनोरथान सताम ।।
(भविष्योत्तरपुराण १४ अध्याय)

य श्रणोतीदमाख्यान मनोरथफलप्रदम ।
इह लोके सुख भक्त्वा सोऽथ याति हरे पदम ।।

अर्थात देवताओ से पूज्य श्रीनिवास भगवान इस प्रकार के अदभुत चरित्र करते हुए एव सन्तो के मनोरथो को पूण करते हुए कलियुग म इस पवत पर ठहरे हुए हैं। इस प्रकार से श्रीवेङ्कटश के इस माहात्म्य को जो सुनता हे वह इस लोक में सुख भोग कर अन्त में श्रीहरि के धाम को जाता है।

ततीय अध्याय समाप्त

।। भविष्योत्तर पुराणोक्त श्रीवेकटाचलमाहात्म्य समाप्त ।।

श्रिय कान्ताय कल्याणनिधये निधयर्थिनाम ।
श्रीवेकटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम ।।

श्रीवेकटाद्रिनिलय कमलाकामुक पुमान ।
अभगुरविभूतिनस्तरगयतु मगलमू ।।

श्रीलक्ष्मीवङ्कटशापणमस्तु ।

1924



श्री

॥ श्रीवेङ्कटेशमङ्गलाशासनम् ॥

ि य का ताय क याणनिधय िधयेऽर्थिनाम ।
श्रीवेङ्कटनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम ॥ १

लक्ष्मीसविभ्रमालोकसुभ्रूविभ्रमचक्षुषे ।
चक्षुषे सवलोकाना वेङ्कटेशाय मङ्गलम ॥ २

श्रीवेङ्कटाद्रिशृङ्गाग्रमङ्गलाभरणाङ्घ्रये ।
मङ्गलाना निवासाय वेङ्कटेशाय मङ्गलम ॥ ३

सर्वावयवसौ दयसपदा सवचेतसाम ।
सदा समोहनायास्तु वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ ४

नित्याय निरवद्याय सत्यान तचिदात्मन ।
सर्वा तरात्मन श्रीमद्वङ्कटेशाय मङ्गलम ॥ ५

स्वतस्सवविदे सवशक्तय सवशेषिण ।
सुलभाय सुशीलाय वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ ६

परस्म ब्रह्मणे पूणकामाय परमात्मने ।
प्रयज परतस्वाय वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ ७

अ कालतत्त्वमश्रा तमात्मनामनपश्यताम ।
अतृप्त्यमतरूपाय वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ ८

प्रायः स्वचरणौ पुसा शरण्यत्वेन पाणिना ।
कृपायऽऽदिशते श्रीमद्वङ्कटशाय मङ्गलम ॥ ९

दयामततरङ्गिण्यास्तरङ्गरिव शीतल ।
अपाङ्ग सिञ्चते विश्व वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ १०

स्रग्भूषाम्बरहेतीना सुषमावहमूतये ।
सर्वार्तिशमनायास्तु वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ ११

श्रीवकुण्ठविरक्ताय स्वामिपुष्करिणीतटे ।
रमया रममाणाय वेङ्कटशाय मङ्गलम ॥ १२

श्रीमत्सु दरजामातृमनिमानसवासिन ।
सवलोकनिवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलम ॥ १३

मङ्गलाशासनपरमदाचायपुरोगम ।
सवश्च पूवरचायस्सत्कृतायास्तु मङ्गलम ॥ १४

दूसरा मुद्रण

४०० प्रतियाँ

